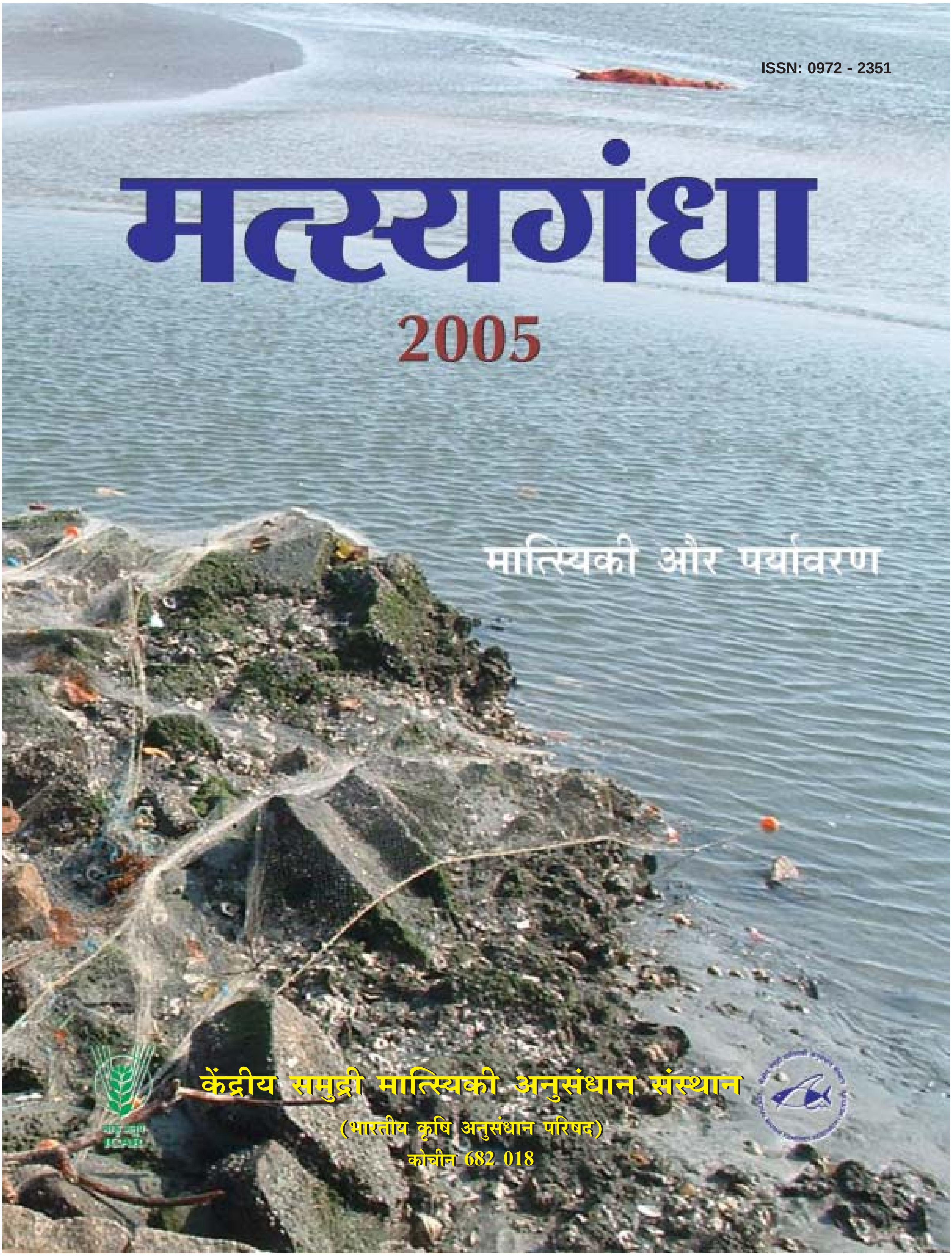

ISSN: 0972 - 2351

मत्स्यगंधा

2005

मात्स्यिकी और पर्यावरण

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान

(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)

कोचीन 682 018

परिरक्षण करें...
भविष्य केलिए.

मत्स्यगंधा

2005

मात्स्यिकी और पर्यावरण

भाकृ अनुप
ICAR

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान

(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)

डाक संख्या 1603, एरणाकुलम नोर्त पी.ओ., कोचीन 682 018, भारत

दूरभाष : 0484-2394867 फैक्स : 0484-2394909

वेबसाइट : www.cmfri.com/hindi ई-मेल : mdcmfri@md2vsnl.net.in

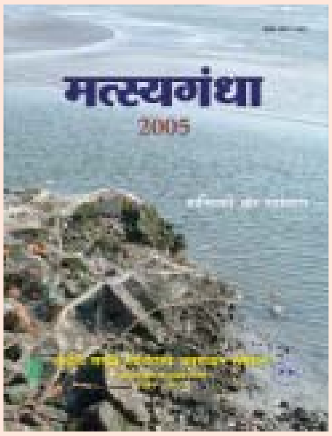

मत्स्यगंधा 2005
ISSN: *0972-2351*
विशेष प्रकाशन सं. 91
अंक 6,
जून 2006

संपादक

डॉ मोहन जोसफ मोडयिल
श्रीमती शीला पी.जे.

संपादकीय मंडल

डॉ ई.वी. राधाकृष्णन
डॉ एन.जी.के. पिल्लै
डॉ एम. श्रीनाथ
डॉ एन.जी. मेनोन
श्रीमती ई. शशिकला
श्रीमती ई.के. उमा

सचिवीय सहायता

श्रीमती सी.ए. लीला

उद्देश्य और विषय क्षेत्र

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान का यह विशेष वार्षिक प्रकाशन मत्स्यगंधा मात्स्यिकी समाचारों को कृषि सूचनाओं की राष्ट्रीय कडी में जोडने के उद्देश्य से निकाला जाता है। संस्थान का अधिदेश समुद्री मात्स्यिकी के क्षेत्र में सीमित रहते हुए भी मात्स्यिकी समाचारों को राजभाषा हिंदी में प्रसार करने की महत्वाकांक्षा इसके पीछे है। प्रत्येक अंक एक केंद्र विषय पर निकाला जाता है और इस अंक का विषय है ***मात्स्यिकी और पर्यावरण***

प्राक्कथन

मात्स्यिकी समाचारों के प्रचार केलिए निकाले जानेवाले हमारे विशेष प्रकाशन मत्स्यगंधा का यह छठवाँ अंक है. इस अंक का हमारा चर्चा विषय है **मात्स्यिकी और पर्यावरण**. विषय की घोषणा पर लेखों का प्रवाह हमारी तरफ़ हुआ जो कि इस बात का सूचक है कि विषय संगत और सामयिक है। विषयवस्तु को मापदंड बनाकर मिले लेखों से 21 लेख हम ने प्रकाशन केलिए चुन लिया और इन्हें दो अध्यायों 1) मात्स्यिकी और पर्यावरण और 2) जलकृषि और पर्यावरण में प्रस्तुत किए हैं.

यह सर्वविदित है कि सभी वाणिज्य प्रमुख मछली जातियों के वितरण, प्रचुरता, हरकत और स्फूर्ति में पर्यावरण का महत्वपूर्ण स्थान है. अपनी विराटता से जटिल सागरों व महासागरों की बहुविध जलवायु स्थितियों में पलनेवाले इन जीवनों पर पडनेवाले पर्यावरणीय प्राचलों का असर अत्यंत दुग्राह्य समझा जाना चाहिए. यद्यपि इन लेखों में ऐसे रहस्यों को खोलने की कोशिश की गई है. जलीय जीवजातों में पर्यावरण की भूमिका के साथ-साथ उनके अतिजीवन और परिरक्षण पर कुछेक लेखों में प्रकाश डाले गए हैं. मछली और मत्स्य उद्योग पर प्रतिकूल प्रभाव डालनेवाले मानवजन्य कार्यकलाप और अतिक्रमणों पर गंभीरता से विचार किए गए हैं. इन वन्य जीवों की आवास व्यवस्था पर होनेवाले हमले, प्रवाल झाडियों और गरान भूमियों के तोड-फोड, अलक्षित और अनियंत्रित मत्स्यन से होनेवाले नाश-नष्ट संबंधी निष्कर्ष इस बात की ओर चेतावनी देता है कि जलीय जैवविविधता के निरंतर विकास केलिए पर्यावरण का परिरक्षण अवश्यंभावी है.

मात्स्यिकी सेक्टर आजकल जलकृषि पर भरोसा कर रही है. दूसरे अध्याय में पर्यावरण में जलकृषि से और जलकृषि में पर्यावरण से होनेवाले संघातों पर विचार किये गए हैं.

इन तकनीकी लेखों के संपादन में जहाँ तक हो सके पाठकों की समझ में आने और पढते वक्त अभिरुचि जगाने की तरह के प्रयास हमारी तरफ़ से किए गए है. मुझे विश्वास है कमियाँ और त्रुटियाँ होने पर भी पाठक इस श्रम को स्वीकार करते हुए हमारा प्रोत्साहन करेंगे. इस आत्मविश्वास के साथ हम यह प्रकाशन आपके समक्ष रखते हैं कि हमारे कामकाज से राजभाषा हिंदी अपना अगुवा करते रहे और लक्ष्य की ओर तेज गति से बढते रहे.

कोच्ची

16-6-2006

डॉ मोहन जोसफ मोडयिल

विवरणिका

भाग I

मात्स्यिकी और पर्यावरण

पृष्ठ सं.

1 **कार्बन के असीमित संचय से सागरीय पर्यावरण और जीवन को संभाव्य आघात**
रीता जयशंकर

7 **पर्यावरण और क्रस्टेशिया मात्स्यिकी**
ई.वी. राधाकृष्णन, जी. नंदकुमार और मेरी माणिश्शेरी

11 **तटीय समुद्री आवास व्यवस्था की पर्यावरणीय अवनति - इसके कारण और सुधार**
एस. शिवकामी

17 **अलक्षित समुद्री जीवसंसाधनों पर मत्स्यन का प्रभाव**
एन. जी. मेनोन

21 **तारली और मलबार सोल के स्टॉक पर बारिश का प्रभाव**
ए.ए. जयप्रकाश, डी. प्रकाशन और के.वी. रमा

25 **एल नीनो और समुद्री पर्यावरण तंत्र में इसका प्रभाव**
एन.जी.के. पिल्लै और के.जे. तारा

29 **गंगा नदी क्षेत्र में भारी धातुओं की मात्रा का मापन व स्वर्णिम भविष्य**
सीमा बंगवाल, दीपक कोठियाल, सीमा ढ़ोढ़िटाल

35 **गभीर समुद्र : समाप्ति की चरम सीमा तक मत्स्यन?**
रेखा जे. नायर

39 **मछली पकड और पालन में *एल नीनो* का प्रभाव**
वी. चन्द्रिका

43 **अंतर्स्थलीय मात्स्यिकी में पर्यावरणीय व्यतियान**
प्रीता पणिक्कर और फिरोज़ खान

45 **गुजरात की समुद्री मात्स्यिकी के कुछ पर्यावरणीय संघात**
के.वी.एस. नायर, पी.के. अशोकन और वी.आर. मधु

49 **प्रवाल झाडियों की अवनति बनाम मात्स्यिकी**
संध्या सुकुमारन

53 **समुद्री जीवियों पर तापमान का प्रभाव**
एस. लक्ष्मी पिल्लै

55 **खाद्येतर समुद्री जीव - औषध रसायनों की खजाना और उनका अनुरक्षण**
आई. राजेन्द्रन

59 **लिपोफ्यूसिन-पर्यावरण प्रदूषण का जैव सूचक**
मेरी के. माणिशेरी

63 **पर्यावरण परिरक्षण का एक केरल प्रतिमान**
विपिन कुमार वी.पी. और आर. सत्यदास

67 **जलाशय...... पर्यावरण का नया आयाम !**
दीपक कोठियाल, सीमा बंगवाल, प्रो.प्रेम वरैत

भाग II

जलकृषि और पर्यावरण

69 **तटीय चिंगट जलकृषि में पर्यावरणीय चुनौतियाँ और इसका प्रबन्धन**
के.के. कृष्णानी, बी.पी. गुप्ता, एस.एम. पिल्लै और पी. रविचन्द्रन

75 **जलकृषि और पर्यावरणः पोषण कितने और कैसे**
इमेल्डा जोसफ और पॉलराज आर.

79 **मत्स्य स्वास्थ्य प्रबंधन में औषधीय व सुगन्धित पौधों का उपयोग**
राघवेन्द्र सिंह, एन.एन. पाण्डेय व विनीता कुशवाहा

81 **मत्स्य पालन में बाँस का उपयोग**
विनीता कुशवाहा, एन.एन. पाण्डेय, राघवेन्द्र सिंह एवं अर्जुन अधिकारी

भाग

1

मात्स्यिकी और पर्यावरण

कार्बन के असीमित संचय से सागरीय पर्यावरण और जीवन को संभाव्य आघात

रीता जयशंकर
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन, केरल

लंबे अरसे से लेकर कार्बन हमारी अभिरुचि का विषय है। इसका एक कारण यह है कि हम सब (दुनिया के सभी पेड-पौधे और जीवजात) कार्बन से बना हुआ है (हमारे सूखे भार का 50%). दूसरा कारण यह है कि मानवीय गतिविधियों के लिए वातावरण में कार्बन डाइओक्साइड (Co_2) जैसे प्रमुख ग्रीन हाउस गैस की बढ़ती होती है जिससे भौम तापमान बढ़ जाता है, समुद्री स्तर ऊँचा होता है और मौसम में भी परिवर्तन होता है। उन्नीसवीं सदी के मध्य में औद्योगिक संग्राम शुरू होने से वातावरण में कार्बन डाइओक्साइड की सांद्रता 30% बढ़ गया है और समाज में उचित ढ़ंग का परिवर्तन न लाया गया तो यह सांद्रता बढ़ती रहेगी।

वातावरण में कार्बन गतिशीलता

ऊर्जा के लिए जीवाश्मी ईंधन (कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस) के ज़्यादातर उपयोग से वातावरण के कार्बन डाइओक्साइड की सांद्रता में वृद्धि होती है और इनकी क्रमागत वृद्धि होती रहेगी। पिछले 150 वर्षों में कार्बन की 25% की वृद्धि जंगल साफ करने और खाद्योत्पादन के लिए मिट्टी के उपयोग से हुई है। जैव कार्बन, जो अवसाद में कोयला, प्राकृतिक गैस और तेल के रूप में सैकडों वर्षों से पहले छिपा हुआ है, इसे मानवीय गतिविधियों के लिए उपयुक्त किया जाता है। इस दर्मियान वातावरण में कार्बन डाइओक्साइड जैसे ग्रीन हाउस गैस की वृद्धि हो रही है। इस प्रकार जीवाश्म ईंधन से रूपांतरित ऊर्जा बिजली, ताप और औद्योगिक ऊर्जा के रूप में हमारे बीच पहुँच जाता है।

पत्रव्यवहार : डॉ. (श्रीमती) रीता जयशंकर, वरिष्ठ वैज्ञानिक,
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान,
पी.बी. सं. 1603, कोचीन - 682 018, केरल

भौमोपरितल में सशक्त तरंग दैर्घ्य का विकिरण खींचकर रखने के कारण वातावरण में वर्धित होने वाले कार्बन डाइओक्साइड पर ध्यान देना शुरू किया गया है। औद्योगिक विकास के पहले तरंग दैर्घ्य का अधिकांश विकिरण CO_2 से होता था और बाकी विकिरण मीथेन, नाइट्रस ओक्साइड और क्लोरो फ्लूरोकार्बन जैसे अन्य गैस से भी। भूमि के वातावरण को अधिकाधिक रूप से खींचकर रखने से कई संघात होते हैं जो कई जटिल फीडबैक कार्यों पर आश्रित है। फिर भी वैज्ञानिकों की राय यह है कि तरंग दैर्घ्य के अधिकाधिक खिंचाव से भौम-तापमान और भी अधिक हो जाएगा। अतः मूमि के मौसम परिवर्तन में मानव की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है।

वातावरण में कार्बन डाइओक्साइड की कोई प्रतिक्रिया नहीं होने की वजह से, दीर्घ काल तक यह ऐसा ही रहता है। लेकिन मानवोद्‌भिद् CO_2 जो ज़िंक का काम करता है, का सिंह भाग भौम-मंडल (पौधे और मृदा) और महासागर द्वारा लिया जाता है इसलिए CO_2 की वृद्धि दर बहुत कम है। कार्बन का प्राथमिक रूप बाइकार्बोनेट है और महासागरों को कार्बन का भौगोलिक संचय स्थान माना जाता है। लगभग 40,000 Gt कार्बन अजैव और जैव अवस्था में मौजूद है। वातावरण में 750 Gt कार्बन है। मिट्टी में उपस्थित कार्बन को छोडकर भौम-मंडल में 610 Gt कार्बन की उपस्थिति आकलित की गई है।

साधारणतया वातावरण, महासागर और भौम भागों में कार्बन का बडे पैमाने में विनिमय होता रहता है और यह विनिमय वातावरण के कार्बन की सांद्रता में उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं बनता है और पूर्व औद्योगिक परिवेश में यह कार्बन संतुलित अवस्था में रहता था। जीवाश्मी ईंधन के ज्वलन, वन नशीकरण और भूमि में विभिन्न उपयोगों की वजह से वातावरण में कार्बन की मात्रा में अधिकाधिक बढ़ती होती है और इस के फलस्वरूप भौगोलिक कार्बन संचय स्थान में असंतुलन की स्थिति पैदा हुई है। इस मानवोद्भिद कार्बन डाइओक्साइड का कुछ भाग भौम मंडल में नियत होता है और इसका अधिक भाग धीमी संतुलन प्रक्रिया से महासागरों में विलीन होता है। वर्तमान में इस प्रक्रिया से प्रतिवर्ष 2 Gt कार्बन नियतन होता है जो सामान्यताः वर्तमान मानवोद्भिद कार्बन विकिरण दर से बहुत कम है।

मानवोद्भिद कार्बन

भौगोलिक स्तर में कार्बन के दोनों प्रमुख संभरण स्थानों का संबंधित स्थान स्थापित करने में वैज्ञानिक लोगों ने प्रगति प्राप्त की है और यह व्यक्त हो जाता है कि गायब होने वाले कार्बन इन दोनों संभरण स्थानों में समान रूप से पहुँचता है। फिर भी वैज्ञानिक लोग इन दोनों संभरण स्थानों के भौगोलिक वितरण और प्रक्रियाओं पर विवाद जारी करते रहते हैं। इन संभरण स्थानों के भविष्य का स्वभाव हमारे अनुमानों के परे अत्यंत विचारणीय हो जाएगा। अतः मानवोद्भिद CO_2 के भविष्य के संघातों पर पूर्वानुमान और शमन करने के लिए उनके स्वभावों पर अच्छी तरह समझना आवश्यक है। भविष्य के स्वभाव का पूर्वानुमान करने के लिए अतीत का स्वभाव जानना महत्वपूर्ण बात है।

मानवोद्भिद CO_2 को स्वीकार करने के लिए महासागरों की क्षमता प्राथमिक रूप से CO_2 का विलयन स्वभाव और समुद्र जल की रासायनिक उभय प्रतिरोधन क्षमता की प्रक्रिया है। अगर अब वातावरण में अनुकूल आकार में रूपाइत CO_2 छिडाव (पल्स) जोड दिया जाए तो इस का लगभग 85% महासागर में विलीन हो जाएगा। लेकिन समुद्रांतर भाग और उपरितल के बीच लंबायमान विनिमय मंद होने के कारण इस प्रक्रिया के लिए 1000 वर्षों से अधिक समय लग जाता है।

नमूना अनुरूपताएं यह सुझाव देती हैं कि अन्टार्टिक (35 °S दक्षिण) के चारों ओर के दक्षिण महा सागर में मानवोद्भिद कार्बन का आधा भाग मौजूद है। इस के अतिरिक्त कुल कार्बन आगिरण का छह भाग उष्णकटिबंधीय भाग (13 °S से 13°N) में होता है। ये दोनों भाग सबसे बडे ऊपरिभाग के क्षेत्र हैं जहाँ उत्स्रवण (उष्णकटिबंधीय और दक्षिण महा सागर में) और गहरे लंबायमान विनिमय (दक्षिण महा सागर) में से गहरे समुद्र का अप्रदूषित पानी ऊपरितल तक आता है और इस पानी में CO_2 को आगिरण करने की क्षमता भी है।

कार्बन स्ववियोजन

जंगल जैसे कार्बन संभरण स्थानों में मानवोद्भिद कार्बन डाइओक्साइड सहित सभी प्रकार के कार्बन को संचय करने की रीति को कार्बन स्ववियोजन कहते हैं। कार्बन को उत्सर्जन के समय ही भूमिगत संभरण स्थानों में संचय किया जा सकता है (भूवैज्ञानिक स्ववियोजन), गहरे समुद्र में अंतःक्षेपण किया जा सकता है (महासागर स्ववियोजन) या पत्थर जैसे खर पदार्थों के रूप में परिवर्तित किया जा सकता है। वातावरणीय कार्बन डाइओक्साइड का स्तर पूर्व औद्योगिक स्तर के 280 प्रति दशलक्ष भाग से अब 375 प्रति दशलक्ष भाग तक बढ़ गया है। कार्बन का संभरण करने के द्वारा वातावरण में कार्बन को मुक्त करने की प्रक्रिया का संतुलन किया जा सकता है। इस वजह से ग्रीन हाउस प्रभाव कम करके पृथ्वी के टिकाऊपन जारी रखने का सुनिश्चयन भी किया जा सकता है। कार्बन का स्ववियोजन तीन प्रकार संभव हो सकता है। भौम स्ववियोजन, भू-तत्व स्ववियोजन और महासमुद्रीय स्ववियोजन। भौमिक आवास व्यवस्था में कार्बन स्ववियोजन दो प्रकार होता है : वातावरण से

CO_2 निकाल देना या भौमिक आवास व्यवस्था से वातावरण में CO_2 का उत्स्रवण रोकना। भौमिक जैव मंडल में प्रतिवर्ष लगभग 2 अरब मेट्रिक टन कार्बन का स्ववियोजन होता रहता है। वन भूमि में अधिकाधिक वृक्षों का रोपण करके भौमिक वियोजन में सुधार लाया जा सकता है। इस दिशा में कृषि भूमि, रेगिस्तान और निम्न भूमि, गड्डे जैसे गीली भूमि और दलदल भूमि के उचित प्रकार के उपयोग करने के लिए अनुसंधान कार्य हो रहे हैं। अवक्षय हुए तेल और गैस संभरण स्थानों, उच्च जैविक घटकों से युक्त छिलका या परत का रूपायन और भूमिगत लवण रूपायन से कार्बन डाइओक्साइड का स्ववियोजन भू-तत्व में होता है। वर्ष 1996 से लेकर स्टाटोइल द्वारा प्रतिवर्ष एक दशलक्ष टन पुनः प्राप्त CO_2 को उत्सिरा रेत, जो उत्तर समुद्र में पाए जाने वाला लवणीय रूपायन है, के रूप में संग्रहित किया गया है। स्ववियोजित CO_2 की मात्रा कोयला-आग से प्रचालित पावर प्लान्ट की ऊर्जा के समान होती है।

महासागरीय कार्बन स्ववियोजन का CO_2 महा समुद्री पानी में विलीन होता है और महासागर प्राकृतिक प्रक्रियाओं द्वारा CO_2 को शोषित करता है और वातावरण में छोड भी देता है। व्यापक रूप से ऐसा माना जाता है कि महासागर संभावित रूप से वातावरण के अधिकांश CO_2 को शोषित करता है। फिर भी महासागर का कार्बन स्वविलयन बहुत धीमी प्रक्रिया है। प्राथमिक उत्पादन के लिए खुला सागर को उर्वर बनाया जाता है ताकि ज़्यादा कार्बन उसमें नियत होता है और संभावित रूप से महासागरीय अवसादों में मिल जाता है।

नीति और नियम प्रणाली

अंतर्राष्ट्रीय विधि कन्वेन्शन के मुताबिक CO_2 को महा सागर में छोड देने की व्याख्या को वर्तमान में बहुत कम विचार और सहमति मिली है। ऊर्जा उत्पादन तथा अन्य औद्योगिक गतिविधियों से निकले हुए CO_2 को औद्योगिक विसर्ज्य का निर्वचन दिया जाता है। समुद्री संस्तर के नीचे समुद्री जहासों, प्लाटफोर्म्स और अन्य मानवजन्य घरातलों से CO_2 को समुद्र में छोड देना समुद्र के नियम पर लंदन कन्वेन्शन और युनाइटड नेशन्स कन्वेन्शन और कुछ क्षेत्रीय कन्वेन्शन के अंदर आने वाले अंतर्राष्ट्रीय नियम का उल्लंखन है। हाल ही में समुद्री पर्यावरण सुरक्षा के वैज्ञानिक पहलुओं पर कार्यरत विशेषज्ञों का युनाइटड नेशन्स ग्रूप द्वारा इस तरह की प्रक्रियाओं की अवैद्यता पर प्रकाश डाला गया है जिस के द्वारा ऐसी प्रक्रियाओं पर अनुवर्ती कार्य उठाने से पहले अंतर्राष्ट्रीय नियमों में परिवर्तन लाना अनिवार्य है।

प्लवक कार्बन का विनिमय

समुद्र जल की हर एक बूँद में पादपप्लवक नामक हज़ारों प्लवमान सूक्ष्म पादप मौजूद है। ये एककोशिका जीव जो - डायटम और अन्य शैवाल सहित है - भौमोपरितल के तीन चौथायी भाग में रहते हैं और इनके प्रकाश संश्लेषण जैवभार में 600 अरब मेट्रिक टन कार्बन का एक प्रतिशत है। लेकिन छोटे होने पर भी ये इस ग्रह के महत्वपूर्ण प्राकृतिक चक्र में प्रमुख भूमिका निभाने का कार्य निभाते रहते हैं। यह तर्कसंगत बात है कि समुद्री पादपप्लवक आनुषंगिक रूप से मौसम पर प्रभाव डालते हैं। हाल ही में कुछ अनुसंधानकारों ने महासागर के इन सूक्ष्म निवासियों की, वातावरण के ग्रीनहाउस गैस कार्बन डाइओक्साइड (CO_2) को शोषित करके गहरे समुद्र में संभरण करने की प्रक्रिया की सराहना की है। नए उपग्रह अन्वेषणों और व्यापक महासमुद्र वैज्ञानिक अनुसंधान परियोजनाएं यह व्यक्त करते है कि भौम तापमान में परिवर्तन, महासमुद्र के परिचलन और पोषण की उपलब्धता में इन संवेदनशील जीवों की भागीदारी है।

महासागर के ऊपरितल के पोषण की कमी से होने वाली पादपप्लवकों की वार्षिक घटती अब अंतरिक्ष से दृश्यमान है। पादपप्लवकों के पर्णहरित में हरित के अंश की खोज करते हुए नाशनल ओशियानिक एंड अटमोस्फेरिक एडमिनिस्ट्रेशन के मार्गरिटा कोन्कराइट और नासा के गोड्डार्ड स्पेस फ्लाइट सेन्टर के वाट्सन ग्रेग को यह व्यक्त हो गया कि वर्ष 1980 के

दशक के प्रारंभ से लेकर पादपप्लवकों में 6 प्रतिशत की घटती हुई है। यह भी मालूम पडा कि उपग्रह द्वारा खींचे जाने वाले फोटो चित्रों में ये पादपप्लवक दिखाई नहीं पडते हैं। कोन्कराइट और ग्रेग यह भी मान लेते हैं कि न केवल पादपप्लवकों की घटती हुई है, बल्कि तिमि, कोड, पेन्विन, सील, साल्मन और समुद्री पक्षियों के साथ-साथ भौगोलिक मात्स्यिकी में भी घटती हुई है।

पादपप्लवक समुद्रोपरितल में रहने पर भी अगर इनकी जीवसंख्या में कुछ टक्कर हुआ है तो इसका प्रभाव समुद्र तल तक पहुँचता है। अब वैज्ञानिकों का यह विश्वास है कि भूमि के जैव जीवन की विविधता का अधिक भाग समुद्र की अदीप्त गहराई में है जहाँ लगभग 10 मिलियन जीव जातियाँ रह सकती हैं। भौम-तापमान से महा समुद्रीय स्तर विन्यास में बढ़ावा होने की वजह से ओक्सिजन से संपुष्ट जल और जैव पदार्थ (मृत और सड़े हुए प्लवक) समुद्र तल तक पहुँचने में असमर्थ होते हैं।

समुद्र जल का अम्लीकरण

भौगोलिक तापमान में हुई वृद्धि मानव जनता के जीवाश्म-ईंधन उपयोग से दुनिया के महा सागरों में परिवर्तन होने का कारण सिर्फ नहीं है। विसर्जनियों और जहाज़ की चिमनी से होने वाले उत्स्रवण महासमुद्र के रासायनिक स्वभाव में परिवर्तन करता हैं और समुद्र जल में कार्बन डाइओक्साइड की मात्रा बढ़ाता है। एक नए अंतर्राष्ट्रीय अध्ययन में एन ओ ए ए के वैज्ञानिकों ने विश्व के हज़ारों विभिन्न स्थानों में समुद्र जल के नमूने का परीक्षण किया और समझा कि समुद्र ने पिछली दो सदियों के दौरान मानवोद्भिद 244 अरब मेट्रिक टन CO_2 को शोषित किया है। CO_2 का यह उच्चतम स्तर महासमुद्रों को और भी अधिक अम्लीय बना देगा। महा समुद्र वैज्ञानिकों की चिंता का विषय है कि वातावरण के CO_2 का स्तर औद्योगिक संग्राम के प्रारंभ काल के 280 प्रति मिलियन भाग से वर्ष 2050 से पहले 560 प्रति मिलियन भाग तक बढ जाने पर साभाव्य आघात कैसा रोका जायेगा।

इस अम्लीय जल में शुक्ति, समुद्री अर्चिन जैसे कवच मछलियों का कवच काल्शियम कार्बोनेट से कड़ा होना बहुत मुशकिल है। इस तरह अम्लजल से प्रभावित समुद्र जीव जैसे प्रवाल पॉलिप जो प्रवाल भित्ति बनाते हैं और कवचयुक्त प्लवक जातियाँ छोटे और मृदु कवच वाले हो जाएंगे। प्रवाल भित्तियाँ जो पृथ्वी का समृद्ध आवास तंत्र है, पर भौम-तापमान के कारण नाशोन्मुख हो चुकी है, आगे महा समुद्र के अम्लीकरण से इस संपदा पर दुगुना प्रहार पड जाएगा। मृदु कवची प्लवक जातियों की घटती का संघात खाद्य श्रृंखला पर पडकर बडे जीवों को भी प्रभावित किया जाएगा।

खाद्य शृंखला पर आघात

पानी में तैरने वाला टीरोपोड नामक चूने के कवच वाला छोटा शंबुक समुद्र में क्रिल से लेकर भीमाकार तिमि तक के विभिन्न जीवों का आहार है। इस के अतिरिक्त टीरोपोड उत्तर पसफिक साल्मन के किशोरों, बांगडों, हेरिंग और कॉड जैसे मछलियों का भी मुख्य खाद्य स्रोत है। वैज्ञानिकों का यह विश्वास है कि समुद्री अम्लीकरण बढ़ते समय टीरोपोड का कवच दुर्बल होता है और कवच के बिना इसको जीना मुशकिल पडता है। इससे हमारे महासमुद्रों की जैव विविधता में उल्लेखनीय परिवर्तन होता है। आगे आवास तंत्र पर होनेवाले संघातों को पहचानने के लिए और भी अनुसंधान करना आवश्यक है। शंबुक के समान समुद्री अर्चिन, तारा मीन, महा चिंगट और शुक्ति, सीपी, शंबु, स्कालोप जैसे कवच वाले द्विकपाटी भी इस रीति से खतरे में पडने की संभावना होने वाले जीव हैं। यह एक संदेह का विषय है कि मछली सहित समुद्र के कई जीव pH की कमी से असिडोसिस या शरीर द्रव में कार्बनिक अम्ल होने की प्रक्रिया से पीडित हो जाएंगे। असिडोसिस से प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया और उपापचय कम होता है और पुनरुत्पादकीय और श्वसन व्यवस्था

में भी कठिनाई होती है। प्रवाल तथा अन्य आवासीय संघातों के साथ असिडोसिस से मत्स्यन व पर्यटन पर आश्रित अर्थ व्यवस्था और इससे जुडे हुए समुदाय को भी दुविधा होने की संभावना है। इस तरह संघात में पड गया एक क्षेत्र है उत्तर पसफिक महा समुद्र जिसमें अलास्का और रूस के बीच का बेरिंग समुद्र सम्मिलित है। इस क्षेत्र की जलवायु और आवास व्यवस्था में पिछले 50 वर्षों के दौरान परिवर्तन हुआ है। 20 वीं सदी में शीत और बर्फी उत्तरद्रुवीय आवास व्यवस्था अब गरम और उप-उत्तरद्रुवीय में परिवर्तित हो गया है। महासमुद्र के इस प्रकार के परिवर्तन से यू.एस. के कुल मछली और कवच मछली अवतरण का आधा भाग होने वाला यह क्षेत्र तुरंत ही संघात में पडने की संभावना है।

दक्षिण महासमुद्र में अन्टार्टिक क्रिल का योगदान

हाल ही में किए गए अनुसंधान से यह व्यक्त हो गया है कि अन्टार्टिक क्रिल, जो दक्षिण महा समुद्र की खाद्य श्रृंखला की प्रमुख कड़ी है, भौम ऊपरितल से कार्बन का आगिरण करके समुद्रांदर भाग में परिवर्तन करते हैं। ब्रिटीश अन्टार्टिक सर्वेक्षण (BAS) और हल्ल विश्वविद्यालय के स्कार्बरो सेन्टर ऑफ कोस्टल स्टडीस के अध्ययन के दौरान यह मालूम पडा कि अन्टार्टिक क्रिल दिन की अपेक्षा रात को कई बार समुद्र के ऊपरितल से गहरे समुद्र की ओर छलांग मारते हैं। इस प्रक्रिया में वे विसर्ज्यों के रूप में गहरे समुद्र में अधिक कार्बन डाइओक्साइड छोड देते हैं। बी ए एस के डॉ. जेरन्ट टार्लिंग ने यह बताया कि लंबे अरसे से हमें ज्ञात हुआ कि क्रिल तिमियों, पेन्गिवन और सीलों का मुख्य खाद्य स्रोत हैं और इन से बच जाने की इनकी कुशलता पर जानकारी नहीं है, बल्कि पर्यावरण के लिए यह अत्यंत जरूरी है। गहरे समुद्र तक छलांग मारते वक्त अधिक मात्रा में कार्बन को भी परिवहन करते है, यह वर्ष में 35 मिलियन मोटोर कारों द्वारा छोड देने के समतुल्य है और इस से इन छोटे जीवों की प्रधानता पर मालूम पड़ता है। दिन में क्रिल समुद्र तल के प्लवकों को खाते हैं और रात को वे परभक्षियों से बचने के लिए समुद्र तल तक जाते हैं। इनके इस स्वभाव से भौम उपरितल से कार्बन को निकाल देने में इनका योगदान व्यक्त होता है।

भविष्य के आघात

विश्व का 71 प्रतिशत महासागरों से आवृत होने पर भी कुछ लोगों ने तटीय क्षेत्रों से दूर 100 फीट की गहराई तक अन्वेषण करने का साहस किया है। यह अत्यंत अनदेखा और दुर्लभ जानकारी है कि महाद्वीपीय उपतटों में मिलियन टन मीथेन हाइड्रेट हिमशीतित अवस्था में मौजूद है। अगर जीवाश्म-ईंधन के उत्स्रवण से महासागर का तापन होकर इस मीथेन जो CO_2 से 20 गुना शक्तिशाली तापन का गैस है - पिधल जाएं तो अत्यंत विपत्तिपूर्ण मौसम परिवर्तन होने की संभावना है। लगभग 250 मिलियन वर्षों पहले पर्मियन उन्मूलन में मीथेन हाइड्रेट के इस तरह के 'डकार' ('burp') से पृथ्वी के जीवन के 90 प्रतिशत का विनाश हुआ था।

मुख्य शब्द/Keywords.
जीवाश्म इंधन - fossil fuel
तरंग दैर्घ्य - wave length
मानवोद्भिद - anthropogenic
कार्बन स्वावियोजन - carbon sequestration
भौम स्वावियोजन - terrestrial sequestration
भूतत्व स्वावियोजन - geological sequestration
उत्सिरा रेत - utsira sand (उत्तर समुद्र में पाए जानेवाला लवणीय रूपान्तरण)
पादपप्लवक - phytoplankton
महासागरीय परिचलन - ocean circulation
पर्णहरित - chlorophyll
एन ओ ए ए - National Oceanic and Atmospheric Administration (NOAA)
टीरोपोड - pteropod (a small snail with a calcium carbonate shell)
बी.एस.एस. - British Antarctic Survey (BAS)

पर्यावरण और क्रस्टेशिया मात्स्यिकी

ई.वी. राधाकृष्णन, जी. नंदकुमार और मेरी माणिश्शेरी
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन, केरल

भारत की समुद्री संपदाओं में चिंगट, महाचिंगट, केकडा अपनी निर्यात माँग के कारण अत्यधिक महत्वपूर्ण उत्पाद माने जाते हैं। वर्ष 2004 में क्रस्टेशिया वर्ग में आनेवाली इन संपदाओं का अवतरण 3.34 लाख टन था जिस में 52% पेनिअइड झींगे; 35% पेनिअइडेतर झींगे, 12% केकडे और 0.4% चिंगट थे।

चिंगट

क्रस्टेशिया मात्स्यिकी की बढत केलिए अनुकूल पर्यावरणीय स्थितियाँ देश में प्रमुख अवतरण केन्द्रों के अवलोकन से व्यक्त हो जाती है। वाणिज्य प्रमुख चिंगटों की बढ़त केलिए अनुयोज्य विशाल ज्वारनदमुख जलक्षेत्र और पश्चजल विभिन्न झींगा जातियों का पालन गेह है। इसकी तलीय मिट्टी बडी संख्या के पादप व प्राणियों का वास स्थान होने के नाते इस जाति को आसानी से आहार और संरक्षण प्राप्त होते हैं। पेनिअइड झींगों के जीवन चक्र में पानी की लवणीयता का महत्वपूर्ण स्थान है। इनके तरुणों की बढ़त के लिए कम लवणीयता अनुयोज्य है। पेनिअइड झींगे ज्वारनदमुखियों और पश्चजलों में अपना प्रजनन काल बिताना पसंद करनेवाले हैं। शैशव के बाद तरुणावस्था में ये समुद्र की ओर प्रवास करते हैं।

कोचीन के पश्चजलों में पूरे वर्ष में ज्वारीय स्थितियों के अनुसार जब पानी का प्रवेश और निकास होता है, निम्नज्वार में चिंगट मात्स्यिकी की अच्छी पकड मिलती है। उच्च ज्वार के समय झीलों में प्रवेश करनेवाले पानी निम्नज्वार में समुद्र की ओर बह जायेगा। निम्नज्वार के समय पानी का बहाव उच्चतम हो जाने पर स्टेक नेटों के ज़रिए पेनिआइड झींगा तरुणों की अच्छी पकड प्राप्त हो जाती है। पकड में *मेटापेनिअस डोबसोनि, फेन्नेरोपीनस इंडिकस* और *एम मोनोसोरस* बडी मात्रा में पाए जाते है। जनवरी-मई में लवणीयता अनुकूल स्तर पहूँचने पर भी झींगा जातियों की अच्छी पकड मिलती है। जून-अगस्त महीनों में बारिश के आगमन से मीठापानी प्रवाह बढ़ जाने पर झींगों की प्राप्ति कम हो जाती है। अमवास्या और पूर्णिमा के दिनों में कोचीन और गोदावरी के जारनदमुख जलक्षेत्रों से झींगों की पकड में वर्द्धन दिखाया पड़ता है। अमवास्या के दिनों में कोचीन के पश्चजलों से मोनोसिरोस झींगों का समुद्र की ओर प्रवास दिखाया पड़ता है।

भौगोलीय स्थान, प्राकृतिक आवास और जलक्षेत्र की तलीय स्वरूप के अनुसार पेनिअइड झींगों का बसाव दिखाया पड़ता है। इस प्रकार *पारापेनिअप्सिस स्टाइलिफेरा* दक्षिण केरल में, *एम. डोबसोनी* कोचीन-कालिकट के बीच के तटीय क्षेत्रों में, *सोलिनोसोरा चोप्री* मंगलूर के दूर तटों में, *एस. कासिकोर्निस* सौराष्ट्र के तटों में, *पी. सेमिसुलकाटस* टूटिकॉरिन-मंडपम तटों में, *एम. डोबसोनी* काकिनाडा-विश्वाखपटनम तटों में बडी मात्रा में पाए जाते हैं। जबकि पेनियेडेतर झींगे उत्तर पश्चिमी समुद्र तटों से अधिक मात्रा में पकडी जाती है जो कि झींगों के प्रत्येक भौगोलीय क्षेत्र पसंद करने का उदारहण है।

इन्हीं आवास व्यवस्था में छोटी जातियाँ कम गहराई में और बडी जातियाँ अधिक गहराई में बसनेवाली हैं। उदाहरण केलिए कोचीन क्षेत्र में *पी. स्टाइलिफेरा* और *एम. डोबसोनी* 15-20 मी गहराई में; *पी. इन्डिकस* 25 मी. गहराई और *एम.*

पत्रव्यवहार : डॉ. ई.वी. राधाकृष्णन, प्रधान वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, सी एफ डी, केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, पी.बी.सं. 1603, कोचीन-682018, केरल

मोनोसिरोस 35-40 मी गहराई में दिखाई पडीं। इसी प्रकार उत्तर-पूर्वी तट में इन्हीं संपदाओं के आनायन मत्स्यन आसान करने केलिए किए गहराई संबंधी अध्ययनों ने व्यक्त किया कि 11-40 मी गहराई में *एफ. इंडिकस*, 11-60 मी में पुलिझींगा और 11-100 मी में मेटापोनिअस झींगों की अच्छी पकड मिलती है। कोचीन के पश्चजलों में दिखाए पडे शिशु झींगे बढ़ती के साथ गहरे जल की ओर प्रवास करते हुए दिखाए पडे।

झींगा स्टाइलिफेरा पूर्णतः समुद्रीजात है जो कि 15-20 मी. गहराई में और इनके तरुण समुद्र तट के 4-5 मी गहराई में दिखाए पडते हैं। कोचीन के समुद्र तटों में 1986-88 के दौरान किए परीक्षणात्मक आनायन ने व्यक्त किया कि जून महीने में ये 20-40 मी की गहराई में बसती तो जुलाई-सितंबर में 40-60 मी गहराई की ओर प्रवास करते हैं। वर्ष 1990 जुलाई-अगस्त में एफ.ओ.आर. वी सागर संपदा निरीक्षण पोत ने 90 मी गहराई में इसकी उपस्थिति सूचित की थी। मानसून के दौरान कोचीन नीन्डकरा के समुद्रों की गहराई से ये अच्छी मात्रा में पकडे जाते हैं। इसी प्रकार मोनोसिरोस झींगा ने भी इस प्रकार का मौसमिक प्रवास दिखाता है जो कि मानसून काल में 90 मी गहराई की ओर प्रवास करता है और मानसून के बाद 30-40 मी. गहराई में दिखाया पड़ता है। मानसून काल में कम हो जानेवाली पानी की लवणीयता और उत्स्रवण से होनेवाले ऑक्सिजन की कमी से बच जाना ऐसा प्रवास के कारण माने जा सकते हैं। कन्याकुमारी और तिरुवनंतपुरम में *एफ. इंडिकस* का मौसमिक मात्स्यिकी दिखायी पड़ती है। मई महीने में तिरुवननंतपुरम के तटों में प्रचुर मात्रा में दिखाए पडनेवाले ये झींगे जून में कन्याकुमारी से होकर अक्तूबर में मनपाड की ओर प्रवास करते है। सी एम एफ आर आइ द्वारा 1972-82 के दौरान चलाए निरीक्षणों ने व्यक्त किया कि प्रवास कोचीन से शुरू होकर मनपाड में पहूँचता है और फरवरी में शुरू होकर अक्तूबर तक चलनेवाला इस प्रवास का कारण समुद्रीय प्रवाह है।

केरल में मानसून मौसम में 'चाकरा' नामक विशेष प्रतिभास दिखाया पड़ता है जिस में समुद्र का विक्षुब्ध रहने पर तीर शांत रहना है। चाकरा के दौरान झींगों को उस कीचड में पलने का अवसर मिल जाता है। यहाँ पलनेवाली मुख्य झींगा जातियाँ हैं *एम. डोबसोनी* और *एफ. इंडिकस*। मई के महीने में यदि मनसूनकाल से पहले बारिश शुरु हो जायें तो वह झींगा मात्स्यिकी की बढ़ती का सूचक है। इस दौरान की पकड में अंडजनन करनेवाली मादाओं की प्रचुरता होती है जो कि इस के पलने का अनुकूल वातावरण का सूचक है। मुंबई में 2002 के दौरान मानसून कम हो जाने पर *एस. क्रासिकोर्निस* और *पी. हार्डिविकी* की अच्छी प्रकड प्राप्त हुई थी।

झींगा संपदाओं के स्टॉक और प्राप्ति में वार्षिक अंतर दिखाया पड़ता है। स्टॉक और प्राप्ति में वयस्क संपदाओं से कोई संबंध नहीं है बल्कि संपदा के स्टॉक का संबंध प्रत्येक वर्ष के पर्यावरणीय स्थितियाँ जैसे मौसम, खाद्य उपलब्धी पर निर्भर रहता है।

महाचिंगट

दक्षिण भारतीय तटों में दिखाए पडनेवाले शूली महाचिंगट (स्पाइनी लॉबस्टर) *पानुलिरस होमारस* 1-5 मी गहराई में जीनेवाला उथला जल चिंगट है। दोनों वयस्क और तरुण पत्थरीली क्षेत्र में दिखाए पड़ते हैं। इसका प्रजनन तटीय समुद्र में होता है और पुनरुत्पादन के लिए प्रवास नहीं किया जाता है। इसके विपरीत *पी. आर्नाटस* के तरुण समुद्र तटों में बसने पर भी वयस्क गहरे समुद्रों में प्रजनन केलिए प्रवास करते हैं। उथले जल में बसनेवाले चिंगटों को फँसाना आसान होने के कारण उनके संरक्षण पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। पंक चिंगट नाम से जाननेवाला *पी. पोलिफागस* समुद्र के कीचडी तलों में जीनेवाले पृथुलवणीय जीव हैं। उष्णकटिबंधीय जाति मानी जानेवाली यह चिंगट पूरे वर्ष में प्रजनन करने पर भी अंडधारिता का विशेष मौसम इनमें दिखाया पड़ता है जबकि अधिकांश मादाएं अंडधारी होंगी। वैसे *पी. पोलिफागस* का अनुकूल प्रजनन मौसम सितंबर है तो *पी.*

होमारस का नवंबर-दिसंबर है। अनुकूल पर्यावरणीय स्थितियों में अंडजनन करने केलिए जीवों द्वारा यह स्वीकरण किया जाता है। उष्णकटिबंधीय शूली महा चिंगट पूरे वर्ष में तापीय वातावरण में जीने के कारण पूरे वर्ष में प्रजनन और अंडजनन करता है। इनके प्लवकी डिंभक उन स्थानों की ओर बह जाता है जहाँ ज्यादा खाद्य उपलब्ध होता है। अतः प्रत्येक जाति का भरण-पोषण उन स्थानों में होता है जहाँ पर्यावरणीय स्थितियाँ अनुकूल हो। अनुमान किया जाता है कि आगोलीय तापमान का प्रभाव समुद्री जीवों के प्रजनन पर प्रभाव डाला जायेगा। पानी का तापमान बढने के साथ जल्द ही वयस्क हो जाने, जननक्षमता कम हो जाने और अंडा उत्पादन कम हो जाने की साध्यता दिखाई पड़ती है।

मुख्य शब्द/Keywords

चिंगट (श्रिंप/झींगा जातियाँ) - shrimp
महा चिंगट - lobster
पेनिअइडेतर झींगे - non penaeid prawns
पुलिझींगा - tiger prawn
उत्स्रवण - upwelling
शूली महा चिंगट - spiny lobster
पृथुलवणीय - euryhaline
ज्वारनदमुख जलक्षेत्र - estaurine system
पौर्णमी - full moon
अमावास्या - new moon
जननक्षमता - fecundity

तटीय समुद्री आवास व्यवस्था की पर्यावरणीय अवनति - इसके कारण और सुधार

एस. शिवकामी
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन, केरल

भूमिका

मात्स्यिकी के ज़रिए खाद्य के उत्पादन, आर्थिक संपदाओं, रोज़गार, आजीविका और मनोरंजन के अर्जन करने की प्रक्रिया में पारिस्थितिक तंत्र के आवास व्यवस्था, संपदाओं और सहवर्ती जातियों और इसके पोषी सहजीवन में परिवर्तन होता है।

यह पर्यावरण के आवास व्यवस्था और जीवसमुदाय के संतुलित अवस्था को बिगाड देती है। मत्स्यन, तलमार्जन, भूमि उद्धार, जलनिकास, तट पर मकान निर्माण तथा प्रदूषण जैसे मानवीय गतिविधियों से आवास व्यवस्था की बाह्य संरचना और जैवविविधता विन्यास पर प्रतिकूल प्रभाव पडता है, इस के फलस्वरूप मछली जातियों का विनाश और मात्स्यिकी उत्पादन में अवनति होती है और मछुआरों की आजीविका में भी इसका बुरा असर पडता है। इस लेख में तटीय समुद्री आवास के विनाश के विभिन्न कारणों पर विश्लेषण किया गया है और इस विनाश को कम करके स्वास्थ्यपूर्ण तटीय समुद्री वातावरण प्रदान करने को सुझाव भी दिए जाते हैं।

कारण

विश्व के समुद्री उत्पादन का 95% नदी मुखों, दलदल भूमि, उथले उपसागर, मैंग्रोव, प्रवाल झाडियाँ और समुद्री घास संस्तर जैसे तटीय आवास स्थानों से प्राप्त होता है। कई वाणिज्यिक प्रमुख मछली जातियों सहित बहु संख्यक समुद्र जीवों के जीवन चक्र और उन्हें प्रजनन, पालन और आहार के धरातल प्रदान करने में इन आवास स्थानों का महत्वपूर्ण स्थान है। समुद्री तटीय पर्यावण पर मानवीय कार्यकलापों के प्रमुख संघात (असर) निम्नलिखित हैं।

पत्रव्यवहार : डॉ. (श्रीमती) एस. शिवकामी, प्रधान वैज्ञानिक
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान,
पी.बी.सं. 1603, कोचीन-682018, केरल

1. मत्स्यन से होनेवाला संघात

विश्व के महाद्वीपीय उप तटों में हलचल पहूंचाने वाला प्रमुख मानवीय कार्यकलाप आनायन है। आवासों पर मत्स्यन द्वारा पड़ जानेवाले संघातों का मूल्यांकन करने पर सिर्फ आनायन और तलमार्जन का मूल्यांकन नहीं करना है बल्कि अन्य गिअरों जैसे फन्दा, पोट, लंबी डोर, गिलजाल और अन्य प्रकार के गिअर (उदाः वेलापवर्ती आनायन), पर्यावरण का भौतिक-रासायनिक प्राचल और लक्षित और अन्य मछली जातियों का मूल्यांकन भी किया जाना है। फिर भी अध्ययनों से यह व्यक्त हुआ है कि उष्णकटिबंधीय चिंगट आनायन से अत्यंत गंभीर संघात होता है जिसमें निम्नलिखित प्रश्न भी सम्मिलित हैं।

क) अनुपयोगी मछलियों और उप-पकड का भारी मात्रा में प्रग्रहण

ख) आर्थिक नष्ट

ग) समुद्री संस्तर और इसके जीवों पर आनायन का प्रभाव।

क) अनुपयोगी मछलियों और उप-पकड का भारी मात्रा में प्रग्रहण

आस्थायी आकलन के अनुसार विश्व की वाणिज्यिक मात्स्यिकी में अनुपयुक्त मछलियों की मात्रा 27 मिलियन टन है

जो 17.9 से 39.5 मिलियन टन के बीच में हिलाता डुलता रहता है (अलवेर्सन आदि, 1994).

यह आकलन किया जाता है कि भारत में लगभग 3.5 लाख टन कूडा-कचडा मछली को प्रत्याशित मूल्य नहीं मिलने की वजह से समुद्र में ही छोड दिया जाता है (ब्लेक और बोस्टोक, 1991) इसमें उप पकड के रूप में मिलनेवाली अलक्षित (नॉन टारगेटड) मछली के अलावा जाल में फँस जाने वाली अन्य मछलियाँ सम्मिलित हैं। इन में कुछ मछलियों को बेच दिया जाता है और बाकी समुद्र में ही फेंक दी जाती है। लेकिन आवासीय और पर्यावरणीय दृष्टि से यह प्रवणता अवांछनीय है क्योंकि इस के फलस्वरूप अनेक मछलियों, अकशेरुकियों, समुद्री स्तनियों, कच्छपों और पक्षियों की मृत्युता होती है। इससे जैव भू रासायनिक चक्र में भी बदलाव आता है। समुद्र जल में खींचे जानेवाले मत्स्यन आनायकों से समुद्र के नितलस्थ जीवों और वाणिज्यिक प्रमुख मछलियों के किशोरों पर दीर्घ कालीन असर पड जाता है। समुद्री जीवों और उनके आवासों को तोड-फोड़के किए जाने वाले आनायन से समुद्री संस्तर की संरचना बिगड जाती है। इस से वाणिज्यिक प्रमुख मछलियों और महा चिंगटों, जिनके जीवन के प्राथमिक स्तर समुद्री संस्तर में बीता जाता है, का बडे पैमाने में नाश होता है। आनायकों और अन्य चलायमान आनायकों (उदाः ड्रेड्जर) के लगातार प्रयोग से समुद्र तल की संरचना, सूक्ष्मतिसूक्ष आवास तंत्र और नितलस्थ जीवों के आवास में परिवर्तन होता है। इन आनायकों के प्रयोग से समुद्री घास और प्रवाल झाडियाँ व संस्तर, स्पंज और नाल कृमि (ट्यूब वर्म) के आवासों में भी विनाशकारी परिवर्तन होता है। मृदु नितलस्थ भाग में संघात कम पड़ जाता है फिर भी लगातार आनायन खतरनाक है।

ख) आर्थिक नष्ट

यह आकलन किया गया है कि वर्ष में बिलियन डोलर मूल्य के किशोर मछलियों को अवांछित मछलियों के रूप में छोड दिया जाता है और इन किशोरों को बढाकर प्रौढ़ता के बाद बेच दिया जाना चाहिए। वर्ष 1980-84 के दौरान कर्नाटक, केरल और तमिलनाडु में 6200 टन किशोर/छोटी मछलियों/झींगों को छोड दिया गया है और यदि इन्हें बढ़ने दिया जाएं तो 77.5 करोड़ रुपए की 1.55 लाख टन मछलियों को प्राप्त किया जा सकते थे। (मेनोन, 1996)

ग) समुद्री संस्तर और जीवों पर आनायन का प्रभाव

केरल तट (भारत) के समुद्री संस्तर और वहाँ के जीवों पर आनायन के संघात का मूल्यांकन करते हुए कुरुप ने यह व्यक्त किया (2004) कि आनायन से समुद्री संस्तर का भौतिक स्वरूप गडबड जाता है और संस्तर का प्रमुख भाग, पत्थर और अन्य वस्तुओं का स्थान भ्रंश होता है। इसके अतिरिक्त लगातार और गहन आनायन से पानी की हाईपोक्सिक स्थिति में परिवर्तन होता है और इस से मछलियों और अन्य जीवों के अंडों, डिंभकों और किशोरों का नाश होता है। आनायन के समय गिअर के भारी भागों और जाल के आघात से समुद्र तल के अवसाद स्तर में तोड-फोड होता है। अध्ययनों से यह भी व्यक्त हुआ है कि चलायमान मत्स्यन आनायन की वजह से नेमटोड जैसे जल्दी नाश होने वाली समुद्र जीव संपदा की प्रचुरता में घटती होती है।

2. अतिमत्स्यन

समुद्री पर्यावरण पर अतिमत्स्यन का प्रत्यक्ष या परोक्ष प्रभाव पड़ता है। अति मत्स्यन से अंडजनन अनुकूल स्तर से भी कम होता है और पकड अधिकतम वहनीय प्राप्ति से कम होती है जिस की वजह से भारी नष्ट भी होता है। जाति मिश्रण में सामान्य तौर का परिणाम होता रहता है। बडे लंबी आयु और उच्च मूल्य वाली मछली जातियों की कमी और छोटे, कम आयु और निम्न मूल्य वाली वेलापवर्ती और तलमज्जी मछलियों की वृद्धि होने पर "खाद्य श्रृंखला का मत्स्यन" की स्थिति पहूँच जाती है। इसके फलस्वरूप भारी मात्रा में छोड देनेवाली गली-सडी मछलियों को खाने वाले पक्षियों की प्रचुरता होती है। गहन

मत्स्यन से प्राकृतिक जीवसंख्या की आनुवंशिक विविधता घट जाती है, मात्स्यिकी और तीक्ष्ण परभक्षी जैसे समुद्री पक्षियों के बीच होने वाली खाद्य की स्पर्धा से जाति मिश्रण में परिवर्तन होता है.

3. अचयनात्मक गिअर

अचयनात्मक मत्स्यन गिअरों (उदाः आनायक, लंबी डोर, गिल जाल) के प्रयोग से किशोर मछलियों, नितलस्थ जीवों, समुद्री स्तनियों, समुद्री पक्षियों या खतरे में पडी हुई जातियों आदि की उपपकड बढ जाती है और अवांछित मछलियों की संख्या भी बढ़ जाती है।

4. गोस्ट मत्स्यन

कुछ गिअरों जैसे गिल जाल, पोट आदि द्वारा लगातार मत्स्यन करने के बाद अनुपयोगी होने पर या विपत्तियों से समुद्र में छोड देने पर अकारण मछलियों की मृत्यु होती है जिसे गोस्ट मत्स्यन कहा जाता है।

5. रासायनिक प्रदूषण

तटीय क्षेत्रों में विभिन्न स्रोतों से विषालू रासायनिक पदार्थ पहूँच जाते हैं जैसे ट्रेस धातू, कार्बनिक प्रदूषक (पोली क्लोरिनेटड बाइफिनाइल पी सी बी), कीट नाशक और पोलीसाइक्लिक अरोमाटिक हाइड्रोकार्बन्स (पी ए एच), पर्यावरणीय और मानव स्वास्थ्य के रासायनिक प्रदूषक जैसे धातु और कार्बनिक प्रदूषक निश्चित वस्तुओं में निहित है। अवसादों में प्रदूषक मिल जाते हैं और वहाँ से समुद्री जीवों, मानव और पर्यावरणीय व्यवस्था में इनका स्थानांतरण होता है।

पी ए एच और पी सी बी जैसे लिपोफिलिक (वसा विलीन) कार्बनिक प्रदूषक जीवों के ऊतक में संचित होकर साधारण उपापचय प्रक्रिया में बाधा डालते हैं जो कि बढ़ती, विकास और पुनरुत्पादन में प्रभाव डालते हैं। समुद्री जीव जातियों के वितरण और प्रचुरता, आवास परिवर्तन, ऊर्जा और जैव -भू-रासायनिक चक्र में परिवर्तन आदि समुद्री पर्यावरण में प्रदूषकों द्वारा होनेवाले संघातों में प्रमुख हैं। समुद्री खाद्य श्रृंखला द्वारा विषाक्त रासायनिक पदार्थों के स्थानांतरण के फलस्वरूप वाणिज्यिक मात्स्यिकी संपदाओं में प्रदूषण बिखेरकर मानव उपभोक्ता तक बुरा असर पहूँचा जाता है। मानव उपभोक्ता में म्यूटाजेनिक, कारसिनोजेनिक या टेराटोजेनिक शक्यता पहूँचाने वाले प्रदूषक मानव स्वास्थ्य के लिए भी खतरा है।

6. तापीय प्रदूषण

पवर प्लान्टों से तापीय विसर्ज्य वस्तुएं पानी में छोड देने से तटीय क्षेत्रों के पानी के तापमान में जटिल परिवर्तन होता है और इस से पानी के लवणता, विलीन ऑक्सिजन, प्राथमिक उत्पादकता, पादप्लवकों और प्लवक जीवों और नितलस्थ जीवों के वितरण आदि प्रकार के पर्यावरणीय परिवर्तन होता है। वाल्टर (1968) ने यह व्यक्त किया है कि ग्रीष्म काल में विसर्ज्य वस्तुओं के छोड देने के स्थान से 1200 फीट दूरी के नितलस्थ जीवों तक इन का बुरा असर पड जाता है।

7. गहन समुद्र कृषि का संघात

द्विकपाटियों का मुख्य आहार सूक्ष्म शैवाल है। द्विकपाटियों की गहन कृषि से पानी के सूक्ष्म शैवालों की मात्रा और पोषक घटक और घट जाती है और पादप प्लवकों के उत्पादन पर इसका असर पड जाता भी है। इस से पूरे समुद्री आवास में परिवर्तन आता है और द्वितीय खाद्योत्पादन में बाधा पहूँच जाती है। इसका बुरा असर मात्स्यिकी संपदाओं पर भी पड जाता है। अतः समुद्री संवर्धन कुछ हद तक पर्यावरणीय अवनति का कारण बन जाता है और मानव स्वास्थ्य और तटीय मेखला के पानी की गुणता के लिए खतरा बन जाता है।

8. प्रवाल भित्तियों पर संघात

उथले जल की प्रवाल भित्तियों को उनकी असाधारण जीव विज्ञानीय विविधता की वजह से "समुद्र का वर्षा वन" कहा जाता है। नितलस्थ आनायन से गहरे समुद्र की प्रवाल

भित्तियों में रहने वाले ग्रूपर और अन्य मछलियों का बहुत अधिक नाश होता है। ये आवास स्थान ग्रूपर और महाचिंगट जैसे मछली जातियों को अंडजनन और शिकार के स्थान प्रदान करने के बावजूद परभक्षियों से बचाते भी हैं। ग्रूपर मछलियाँ इन प्रवाल आवासों में बडे समुच्चय में अंडजनन करते हैं और इन आवास स्थानों के विनाश से इन मछली संपदा का भी भारी विनाश होता है। आवास के नाश से जीव संख्या घटती, जाति समाप्ति जैव विविधता ह्रास और समग्र आवासीय असंतुलन संभव होता है. इन सब का समग्र प्रभाव जीव संख्या घटती और मात्स्यिकी उत्पादन में कमी है जिसका बुर असर मछुआरा समुदाय की आजीविका पर भी पड़ता है।

समुद्र में कचरा पदार्थ (गिअर, धागा, आहार के बर्तन, प्लास्टिक आदि) जमा होने से कई संघात उत्पन्न होते हैं, कारखानों से छोड देने वाले बहिर्गाव से कार्बनिक प्रदूषण, संसाधन प्लान्टों से तटीय प्रदूषण, धूप और प्रशीतक ग्रैसों को छोड देने से भूगोल तापन आदि संघात भी इन में सम्मिलित हैं।

निवारण उपाय

1. मात्स्यिकी प्रबंधन की एक बडी समस्या है अति मत्स्यन। मत्स्यन क्षमता के बेहत्तर नियंत्रण और संपदाओं के पुनः नवीकरण के लिए पर्याप्त योजनायें खींचकर इस पर सुधार लाया जा सकता है। इस प्रकार करने से जाति मिश्रण में सुधार हो जाएगा और अन्य मछली जातियों को परेशान करने के बिना प्रत्येक आवास व्यवस्था में विदोहन करना साध्य होता है।

2. बेहत्तर संभार प्रौद्योगिकी और सुधरे गए मत्स्यन कार्यों द्वारा मत्स्यन गिअरों का चयन आसान होता है और तद्वारा मत्स्यन से नितलस्थ आवासों में होनेवाले संघात कम किए जा सकते हैं। गिअरों में परिवर्तन और/या बदल मत्स्यन गिअरों के परिचालन से चुनकर मछली पकडी जा सकती है आनायकों और गिल जालों में पकडे गए जीवों के आकार नियमित करने केलिए जालाक्षि का आकार एक प्रमुख घटक माना जाता है। चलायमान गिअरों जैसे आनायक और संपाश में, कोड एन्ड में चतुषकोणीय जालाक्षियाँ जोड़कर और कोड एन्ड के आगे निस्यन्दन ग्रिड जोड़ने से मछली की चयनात्मकता में सुधार लाया जा सकता है। आनायक के कोड के आगे कच्छप निकासी उपाय (टी ई डी) जो एक दृढ़ या मृदु संरचना है, जोडने से कच्छपों के फँस जाने से परिहार मिल सकता है।

3. समुद्र में पुराने गिअरों को छोड देने की प्रवणता कई जागरूकता अभियानों द्वारा कम किए जाने से और समुद्र में नष्ट हुए गिअरों के पुनर्ग्रहण के कार्यक्रमों के आयोजन से गोस्ट मत्स्यन कम किया जा सकता है। विकसित गिअर प्रौद्योगिकी द्वारा गिअर से नष्ट होने वाली कमी कम किया जा सकता है (उदाः बयोडिग्रेड बिल सामग्री,कोलाप्सिबिल ट्राप आदि), नोर्वे जैसे देशों में समुद्र तल में पड गए पुराने क्लोम जाल के टुकडों को पुनः प्राप्त करने के कार्यक्रम चालू हैं।

4. विस्फोटनात्मक मत्स्यन रीतियों को शक्त रूप से रोकना चाहिए।

5. समुद्री संरक्षित क्षेत्रों (एम पी ए) का नियमन प्रबल बनाना एक अच्छा उपाय है। लैगूनों, पंक तटों और प्रवाल भित्ति क्षेत्रों में विशेष सर्वेक्षण करके समुद्री संरक्षित क्षेत्रों का नियमन किया जाना है।

6. प्रवाल क्षेत्र गहरे समुद्र की प्रवाल आवास व्यवस्था का संकेत है। अतः उच्च स्तर की मत्स्यन पकड मिलने पर भी प्रवाल प्रबंधन स्थानों में मत्स्यन गिअरों का परिचालन स्थायी रूप से रोकना चाहिए। ऐसे स्थानों को प्रवाल अध्ययन स्थान के रूप में नामांकित किया जाना है।

7. सभी मध्यवर्तियों विशेषतः तटीय क्षेत्रों में रहने वाले लोगों और समुद्री संपदाओं पर निर्भर लोगों को समुद्री जैव विविधता की बेहत्तर उपयोगिता के लिए इनकी प्रधानता पर अवगाह दिया जाना चाहिए। इस के लिए भारतीय तटों और समुद्री आवासों की समुद्री जैव विविधता का स्तर और भारत के समुद्री पर्यावरण

में खतरे में पड गए वनस्पति और जीव जातियों को मुख्य विषय के रूप में लेना चाहिए।

8. संदूषण के कारण जोखिम में पड गए शक्य क्षेत्रों के निर्धारण का प्रयास।

9. तापीय विसर्ज्य वस्तुओं को उपसागर में छोड देने के बजाय इन्हें ठंठ करके पुनः उपयुक्त किया जाएं।

10. समुद्री संवर्धन के नए स्थानों की शक्यता के पूर्वानुमान के लिए समुद्री संवर्धन क्षमता और आवासी क्षमता के आधार पर मोडलों की स्थापना की जानी चाहिए।

11. आवास व्यवस्था और पर्यावरण पर समुद्री संवर्धन के संघात और गहन समुद्री संवर्धन का संबंध और समुद्री मात्स्यिकी संपदाओं के परिवर्तन पर अध्ययन करना।

12. विभिन्न स्थानों में समुद्री संवर्धन जातियों, क्षेत्रों, सान्द्रता, संवंर्धन नमूना आदि का निर्धारण और नियंत्रण करने के लिए विभिन्न क्षेत्रों की विशेष आवास तंत्रीय और पर्यावरणीय स्थितियों के आधार पर टिकाऊ प्रबंधन व्यवस्था स्थापित करना।

13. प्रदूषित क्षेत्रों से पकडी गयी मछलियों का खपत नहीं करने के लिए लोगों को चेतावनी देना।

14. संदूषित क्षेत्रों को बंद क्षेत्रों के रूप में घोषित करना।

निष्कर्ष

समुद्री पर्यावरण और मात्स्यिकी प्रबंधन आपस में जुडे हुए हैं। तटीय समुद्री आवास तंत्र में स्वास्थ्य पर प्रभावित होने वाली कई समस्याएं हैं। यह मात्स्यिकी पर्यावरणकारों, प्रशासकों और मध्यवर्तियों को जुडकर और संबंधित मछुआरा लोगों को भी मिलाकर सुलझाने का भौगोलिक मामला है। अर्थ व्यवस्था और मछुआरा कल्याण को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करने वाले संपदा अवनति और अवक्षय से तटीय आवास व्यवस्था को संरक्षित करने के लिए मामलों का विश्लेषण, कारणों पर रूपरेखा तैयार करने और नियमन/प्रबंधन उपाय ढूँढने और लागू कराने केलिए लगातार प्रयास किया जाना आवश्यक है।

मुख्य शब्द/Keywords

संघात - impact
महाद्वीपीय उपतट - continental shelf
तलमार्जन - dredging
फन्दा - trap
लंबी डोर - long line
गिअर - gear
कूडा-कचडा मछली - discard
प्रवाल झाडी - coral reef
स्पंज - sponge
नाल कृमि - tube worm
पी ए एच - (PAH) Polycyclic Aromatic Hydro carbons
पी सी बी - (PCB) Poly Chlorinated Byphenyls
उत्परिवर्तन कारक - mutagenic
कैंसर कारक - carcinogenic
जन्म के समय विलक्षित - teratogenic
एम पी ए - Marine protected area (MPA)

अलक्षित समुद्री जीवसंसाधनों पर मत्स्यन का प्रभाव

एन. जी. मेनोन
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन, केरल

मत्स्यन पुरातन काल से तटीय आबादी का एक मुख्य जीविकोपार्जन मार्ग है। धीरे धीरे यह एक राष्ट्रीय धरोहर और करोड़ों लोगों के पौष्टिक आहार का स्रोत बन गया। जब बढ़ती आबादी इस संपदा का विदोहन, उपलब्ध पानी से करने लगा तब कई अवसरों पर अतिविदोहन का प्रश्न सामने आने लगा। इसका कारण इन जीवों के प्राकृतिक उत्पादन और पूर्ति के लिए समय दिए बिना किये जानेवाले अतिविदोहन माना जाता है। मछली पकड के लिए विकसित की गई प्रौद्योगिक सुविधाओं ने मत्स्यन को आसान करने के अतिरिक्त कई प्राकृतिक संपदाओं के विनाश का कारण भी बन गया। यद्यपि नए गिअर और मत्स्यन रीतियाँ अलग अलग मछली जातियों की पकड को लक्षित करके विकसित की गई है तथापि इस में उप पकड (अवांछित मछली) के रूप में बडी मात्रा में मछली संपदाएं फँस जाती है। कई मत्स्यन प्रयासों में लक्षित पकड से अधिक उप पकड फँस जाना साधारण बन गया है। परिचालन किए संभार परिचालित क्षेत्र, मौसम और गिअर के चयनात्मक स्वरूप के अनुसार उप पकड की मात्रा में फरक आ जाता है। उप पकड के रूप में फँस जानेवाली संपदाओं में झींगों व मछलियों के तरुण और नाबालिग, नितलस्थ जीवजात, समुद्री कच्छप, खतरे में पडी सस्तनी जातियाँ शामिल होती है जिनको कूडे-कचरे के समान समुद्र में वापस फेंक दिया जाता है। खाद्य कृषि संगठन के आकलन के अनुसार आगोल तौर पर ऐसे 25% उप पकड का नाश होता है।

पत्रव्यवहार : डॉ. एन.जी. मेनोन, प्रधान वैज्ञानिक,
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान,
पी.बी.सं 1603, एरणाकुलम नोर्थ पी.ओ.,
कोचीन - 682 018, केरल

आनायन

पिछले कुछ दशाब्दों से भारतीय समुद्रों में मत्स्यन केलिए आम तौर पर उपयोग किये जानेवाला गिअर है ट्रॉल या आनाय। इसकी जालाक्षि बहुत छोटी है जिसके धागाग्र में आकार 18-30 मि.मी. होता है। इसका परिचालन समुद्र में होने पर जाल बिछाए गए मार्ग की बहुत सारी जीवियाँ इस में फँस जाती है। इस जाल का प्रयोग छठवीं के दशकों में भारतीय समुद्रों में किये जाने लगे, बडे मुनाफेदार होने के कारण बडे चाव के साथ मछुए उद्योग ने इसे स्वीकार किया। इसका प्रचालन ट्रालरों के ज़रिए भारत के समुद्रवर्ती तटों में हो रहा है जो कि सब से प्रचुर मत्स्यन तकनीक हो गया है।

ट्रालरों का निरंतर प्राचालन जब कुछेक विपरीत मौसम को छोडकर होता रहता है, के फलस्वरूप कई अलक्षित संपदाएं जिनमें बहुजातीय पख मछलियाँ व कवच मछलियाँ और नितलस्थ जीवजात के तरुण और अपवयस्क पकडा जाता है।

ये न तो खाद्य योग्य है या नहीं बेचनेलायक, पर कई उपयोगी मछली संपदाओं की खाद्य श्रृंखला में ये निर्णायक घटक हैं। समुद्र के नितलस्थ तटों से होते हुए आनायन होने पर कई नितलस्थ जीवजातों की हत्या, निमज्जन व परभक्षण होने के अलावा तलीय अवसाद में उश्रृंखलता आ जाती है। समुद्रतलों की स्थलाकृति और जैवरासायनिक तत्वों पर होनेवाला प्रभाव नितलस्थ प्राणिजातों के जीवन पर भी प्रतिफलित हो सकता है।

इसलिए दोनों प्राणिजातों और पारिस्थितिकी पर ट्रॉलिंग से होनेवाले प्रभाव का मोनिटरन, आकलन और आवधिक प्रलेखन जैवविविधता संरक्षण की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। उपर्युक्त के अलावा इन में कुछेक जीव मूल्यवान दवाओं के निर्माण के लिए उपयोग किए जानेवाले भी हैं।

कर्नाटक, केरल और तमिलनाडु के कुल आकलित आनाय अवतरण में लक्षित मछलियाँ जैसे चिंगट और शीर्षपादों का 20%, पख मछलियों का 65% और नितलस्थ जीवजातों का 15% योगदान होता है। कुल अवतरण का 1.5% वाणिज्य प्रधान खाद्य एवं कवच मछलियों का तरुण होता है। फिर भी इसकी मात्रा और गुणता पकडनेवाले श्रिंप या फिश ट्राल, लक्षित संपदाएं, मत्स्यन करने का समय, आनायन करनेवाले क्षेत्र का स्वभाव और गहराई, मौसम और समुद्र की स्थितियों पर निर्भर रहती हैं। नितलस्थ जीवजात सामान्यतः तटवर्ती समुद्रों से ज्यादा पकडी जाती है। रातकाल में पकड मात्रा ज्यादा भी होती है। उप पकड कभी समुद्र में फेंका जाता है, कभी तट पर लाकर मछली आहार या खाद तैयार करने केलिए उपयोग किया जाता है। केरल, कर्नाटक और तमिलनाडु में रद्दी मानकर छोडनेवाली ऐसी मछलियों की मात्रा 43,000 टन के निकट है जिसका 81% रंध्रपाद है। ट्रॉलरों द्वारा होनेवाली पकड का एक अच्छा भाग समुद्र में छोड दिए जाने के कारण अवतरण की मात्रा पर आधारित डेटा ही उपलब्ध है। एक विशुद्ध आकलन के अनुसार करीब 1.3 लाख टन विपणनेतर जीवजातों की पकड उस क्षेत्र से होती है। अच्छा दाम मिलनेवाली मछलियों की पकड होने पर इन पकडों को फेंक देना साधारण बन गया है।

उनका नाश परभक्षियों के आहार श्रृंखला और तटवासी प्लवक जीवों की प्रचुर प्रजनन में प्रतिकूल प्रभाव डालेगा। पहचाने गए उप पकड में निम्नकोटि/अखाद्य तलीय मछलियों के 20 वंश; क्रस्टेशियनों के 26 वंश; जठरपादों के 23 वंश; द्विकपाटियों, पोलिकीट, अनिमोन, स्पंज, इकिनोडर्म, गोरगोनिड, असिडियन, इकिरिड, जेली फिश के 15 वंश शामिल हैं। यह खाद्य योग्य कई पख मछलियों, झींगों, केकड़ों और शीर्षपादों के तरुणों के अतिरिक्त है। समुद्र के अधोतटों पर होते हुए खींचे जानेवाले ट्राल जाल किसी एक या कुछ चुनी गई मछली जातियों को लक्षित न करके परिचालित किए जाने पर कई समुद्री जीवजातों की आवास व्यवस्था और सुरक्षा खतरे में पड जाना स्वाभाविक है। फिर भी कई मछलियों के तरुणों विशेषकर चिंगटों के तरुणों की पकड पर सावधानी बर्तने को ट्राल जालों का जालाक्षि आकार 30-35 मि.मी. कर दिया जा सकता है।

छोटा आनायन (मिनि ट्रॉलिंग)

केरल के कोल्लम जिले के परंपरागत मछुआरों ने 1980 के दशकों में एक तलीय खींच गिअर (bottom draggen gear) का प्रचालन पहली बार शुरू किया। इस केलिए परंपरागत तरीके के डंगियों और जालों का परिष्कार किया। जालों को तलों तक पहूँचा कर घसीटने के अनुसार भार लगाया गया और बाहरी इंजन से चलनेवाले डंगियों से प्रचालन किया। जाल की लंबाई 6 मी, ओरों में लगाए गए भार 15 कि. ग्रा., और जालाक्षि आकार 10-20 मि. मी है। यह तटीय जल में जहाँ पानी की गहराई 15 मी से कम है, मत्स्यन करने केलिए बनाया गया है। इसके प्रति परिचालन पर 169 कि.ग्रा. पकड दर अंकित किया है। पकड में पख मछली (57%) झींगा (29%) और बाकी विपणनेतर नितलस्थ जीवजात (रंध्रपाद, जठरपाद, केकडा, इकिनोडर्म, द्विकपाटी, पोलिकीट) और चिंगट (*पी. स्टाइलिफेश*), चपटीमछली, सियेनिड आदि होते हैं। ऐसे नितलस्थ जीवजातों की पकड से तटीय नितलस्थ जीवजातों की जैवविविद्यता में प्रतिकूल प्रभाव और परभक्षियों का तटीय प्रवास में मन्दता दिखाई पड़ती है।

पर्यावरण और विकास पर संघ राष्ट्रों के सम्मेलन (United Nations Conference on Environment & Development) जो 1992 में आयोजित किया गया जिसके निर्णयों पर भारत ने भी सहमति प्रकट की जाने के तहत यह अत्यंत अनिवार्य है कि हम भी हमारी धनी समुद्री जैवविविधता का

रहन और सुरक्षा सुनिश्चित करें। यदि देश में मत्स्यन इस दबाव में जारी रखें तो मछलियों और उससे सहवास करने वाले जैवमात्रा का भारी नाश हो जायेगा। साथ ही साथ अति आवश्यक मछली संपदाओं के अतिविदोहन से उन संपदाओं का टिकाऊपन खतरे में पड जायेगा। इस प्रकार हाल में हुए प्रौद्योगिक विकास से संपदाओं के साथ पर्यावरण पर भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रतिकूल स्थितियाँ संजात हो सकती है। ऐसी अवस्था न हो जाने को मत्स्यन प्रणालियों और प्रयासों में नियंत्रण बरतना अनिवार्य है। मत्स्यन के अलावा समुद्रों और समुद्री तटों में होनेवाली मानवीय हस्तक्षेपों से पर्यावरण में अवनति, जीवजातों के वासस्थानों का नाश और प्रदूषण हुआ करता है। किसी चुनी गई मछली जातियों केलिए मत्स्यन किए जाने पर भी अवांछित जातियों की पकड न रोके जाने और कइयों के आवास और प्रजनन गेहों का नाश निरंतर होने के कारण प्राकृतिक संतुलन बिगाड जाना स्वाभाविक है। कई अवसरों पर खतरे में पडी जाति के रूप में सूचीबद्ध संपदायें जैसे समुद्री स्तनियाँ और कछुए भी गिलनेट, पर्सनेट आदि में फँस जाने से समुद्री जीववैविद्यता में बुरा असर होता है।

नियामक उपाय

यंत्रीकृत आनायन से हुए मत्स्यन दबाव से चिंगट और शीर्षपाद मछलियाँ पीडित है। फिर भी यंत्रीकृत और परंपरागत मछुआरों के बीच कोई नियंत्रण के बिना लडाई के साथ मत्स्यन हो रहा है। इसे रोकने को राज्य सरकारों ने समुद्री मात्स्यिकी नियामक अधिनियम को लागू किया है। इस अधिनियम के अनुसार यंत्रीकृत ट्रालरों द्वारा 20 मी. तक के तटीय क्षेत्र में और मिनि यंत्रीकृत ट्रालरों द्वारा 30 मी. तक के तटीय क्षेत्र में आनायन करना मना है। जालाक्षि का न्यूनतम आकार 35 मि मी नियमन किया है। केरल में रात्रिकालीन आनायन मना है। सिवा इसके केरल सरकार ने अपने प्रादेशिक जलों में मनसूनकालीन आनायन मना किया है। मत्स्यन में लगे कई लोगों के प्रतिशीर्ष आय इन नियमनों से प्रतिबंधित हो जाने से इसका अनुपालन शिथिल हो जाता है। इसलिए मछुआरों के बीच इस पर अवबोध जगाने के कार्यक्रम आयोजित करना समिचीन होगा।

मुख्य शब्द/Keywords

उपपकड - bycatch

तरुण - Juveniles

अपवयस्क - sub adults

नितस्थ जीवजात - benthic biota

रंध्रपाद - gastropod

UNCED - United Nation Conference on Environment & Development

CITES - Convention on International Trade on Endangered Species

तारली और मलबार सोल के स्टॉक पर बारिश का प्रभाव

ए.ए. जयप्रकाश, डी. प्रकाशन और के.वी. रमा
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन, केरल

भूमिका

विभिन्न मात्स्यिकी संपदाओं के वाणिज्यिक विदोहन की शुरुआत से ही विश्व में पर्यावरण और मात्स्यिकी वैज्ञानिकों के बीच का रोचक विषय बन गया है। इन वर्षों में संपदाओं के वार्षिक उत्पादन में व्यापक उतार-चढ़ाव देखा गया था। इसके फलस्वरूप पर्यावरण और मत्स्यन के बीच का संबंध ध्यान में आने लगा। मात्स्यिकी संपदा मानव द्वारा विदोहित और उपयुक्त किसी अन्य संपदा (उदाः खनिज संपदा) के बराबर है। खनिज संपदा पुनरुज्जीवन करने लायक नहीं हैं, अतः विदोहन की अधिकता के आधार पर संपदा की समाप्ति होती है। लेकिन मात्स्यिकी संपदा स्वतः नियमित और पुनः उत्पादित होनेवाली है। जीवसंख्या के एक हिस्सा निकाल देने पर उसी आवास के बाकी जीवों को बेहत्तर खाद्य और जीने के लिए अधिक स्थान मिलते हैं और इस से तेज़ बढ़ती दर, कम मृत्युता और अच्छी अतिजीवितता होती है और संपदा जल्दी ही पुनर्जीवित होती है। लेकिन यानों और संभारों में हुए नए नए परिष्कार और मत्स्यन तरीकों में हुए परिवर्तन से संपदाओं का विदोहन भी तेज बढ़ गया। संपदाएं मात्स्यिकी के अतिरिक्त खाद्य की उपलब्धता, लवणता में परिवर्तन, पानी का तापमान, समुद्री तरंगों में परिवर्तन, मौसम का प्रभाव आदि पर्यावरणीय घटकों से प्रभावित है। इस प्रकार मात्स्यिकी संपदाएं अत्यधिक गतिशील है और मत्स्यन प्रभाव और मात्स्यिकी के अतिरिक्त घटकों के प्रभाव से परिवर्तनीय है। संपदाओं के उतार-चढ़ाव पर प्रभावित वास्तविक पर्यावरणीय घटक का पहचान करें तो मात्स्यिकी का पूर्वानुमान और टिकाऊ विदोहन चालू रखा जा सकता है।

कई मात्स्यिकी संपदाओं में होनेवाले व्यापक उतार-चढ़ाव, जीव संख्या ह्रास और इस के उपरांत स्टॉक में होने वाली बढ़ती वर्षों से पहले ही शोध का रोचक विषय बन गया था। कभी कभी मत्स्यन मृत्युता में कुछ विशेष जाति मछलियाँ अलग रूप से पड जाती है, उदाहरणार्थ तारली *(सारडिनेल्ला लोंगिसेप्स)* जैसी वेलापवर्ती मछली की भारी मृत्युता। इस मछली जाति की पकड में हुआ वार्षिक उतार-चढ़ाव इसकी सुस्पष्ट बात है। कई तालमज्जी मछली जातियों में भी यही प्रवणता देखी जाती है। समय समय पर भारत के वैज्ञानिक तारली स्टॉक के उतार-चढ़ाव के संबंध में मात्स्यिकी और मात्स्यिकेतर घटकों पर खोज करते रहते हैं। तारली भारत के दक्षिण-पश्चिम भाग के मलबार उत्स्रवण क्षेत्र से वाणिज्यिक तौर पर बडी मात्रा में विदोहन करने वाली मछली जाति है। उत्तर के रत्नगिरी से दक्षिण के कन्याकुमारी तक फैला गया यह क्षेत्र हमारे देश के चारों ओर का अत्यंत उपजाऊ समुद्री क्षेत्र माना जाता है। वार्षिक उत्स्रवण इस क्षेत्र की एक विशेषता है। इस क्षेत्र की मौसमिक विशेषताएं और समय पर मिलने वाली मानसून जो विश्व में और कहीं नहीं घटती है, वैज्ञानिकों के लिए आकर्षक विषय है। इस प्रकार जलवायु परिवर्तन का लयात्मक स्वभाव मछली पकड (प्रचुरता) पर भी प्रभावित होता है। हाल ही में किए गए अनुसंधान से यह संकेत मिलता है कि दक्षिण पश्चिम मानसून कई मात्स्यिकी संपदाओं की स्टॉक वर्धन प्रक्रिया को प्रभावित करती है। इसी प्रकार जलदी या देर से मिलने वाली

पत्रव्यवहार : डॉ. ए.ए. जयप्रकाश, प्रधान वैज्ञानिक,
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान,
पी.बी.सं 1603, एरणाकुलम नोर्थ पी.ओ.,
कोचीन - 682 018, केरल

मानसून भी अच्छी या बुरी मात्स्यिकी का कारण बन जाती है।

इस लेख में केरल में दक्षिण पश्चिम मानसून शुरू होने की तारीखें और तारली और तलमज्जी मछली नामक मलबार सोल *साइनोग्लोसस माक्रोस्टोमस* की स्टॉक वर्धन प्रक्रिया में मानसून के प्रभाव पर प्रकाश डाला जाता है। इस के लिए केरल में वर्ष 1900 से अब तक बारिश (द.प. मानसून) मिलने की समय सारणी और तारली तथा मलबार सोल के वार्षिक उत्पादन आंकडों पर विचार किया गया है।

तारली की उत्पादन प्रवणता

वर्ष 1923-24 के दौरान पश्चिम तट पर तारली की मात्स्यिकी की उल्लेखनीय बढ़ती हुई थी और इसके बाद में लगभग 22 वर्षों तक मात्स्यिकी में घटती दिखाई पडी। वर्ष 1943-47 की अवधि में उत्पादन में 500 टन की लगातार घटती मौजूद हुई थी। वर्ष 1950 से लेकर मात्स्यिकी में थोडा पुनरुज्जीवन होने लगा और वर्ष 1968 के दौरान मछली पकड में 3001 लाख टन की आश्चर्यजनक वृद्धि हुई। इस के बाद पकड में कमी होने पर भी वर्ष 1989 में 2.9 लाख टन तक की वृद्धि हुई और 1994 तक पकड में क्रमिक रूप से अवनति होकर 47,000 टन मछली प्राप्त हुई। बाद में छः वर्षों की

स्टॉक पुनरुज्जीवन प्रक्रिया (श्रृंग)

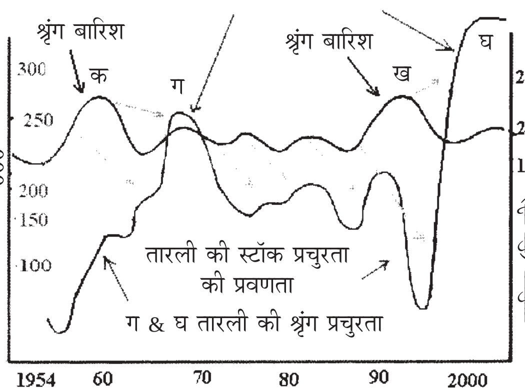

चित्र 1. बारिश की गहनता के आधार पर तारली स्टॉक की पुनरुज्जीवन प्रक्रिया

अवधि में वर्ष 2000 में 3.63 लाख टन और 2003 में 4.01 लाख टन का सब से अधिक उत्पादन हुआ। चित्र 1 में उतार-चढ़ाव की दशकीय प्रवणता का व्यक्त चित्रण दिया गया है।

मलबार सोल के उत्पादन की प्रवणता

भारत में विदोहन की जानेवीली चपटी मछलियों में मलबार सोल सबसे प्रमुख है। वाणिज्यिक मात्स्यिकी भारत के दक्षिण-पश्चिम तट तक प्रतिबंधित है। पूरे भारत में चपटी मछली के कुल उत्पादन में केरल और कर्नाटक का योगदान क्रमशः 46% और 14% है। केरल में 1950 से 1990 तक के दशकीय वार्षिक उत्पादन क्रमशः 7700 टन, 7900 टन, 9,900 टन और 44,500 टन था। छोटे आनायकों के आविष्कार से चपटी मछलियों के उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि दिखाई पडी।

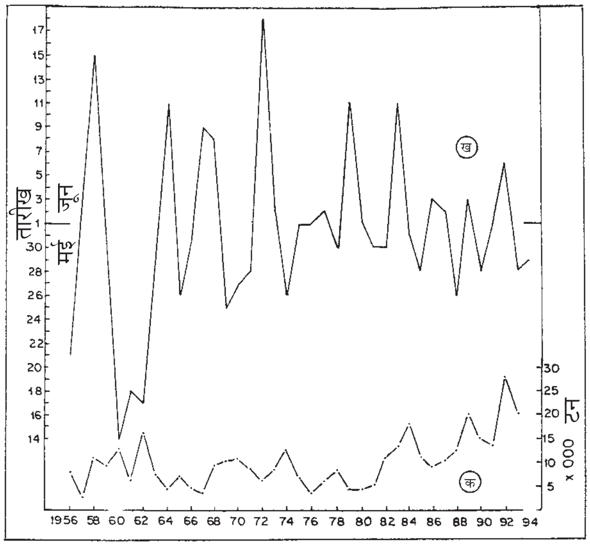

चित्र 2. मानसून काल की शुरुआत में मलबार सोल की वार्षिक पकड (क=पकड, ख=मानसून की तारीखें)

केरल में बारिश की प्रवणता

केरल में मिलने वाली वार्षिक बारिश लगभग 300 से.मी. आकलित की गई है जिसका 71% (213 से.मी.) दक्षिण पश्चिम मानसून, 16% उत्तर पूर्व मानसून और 13% ग्रीष्म

काल की बारिश का योगदान है। दक्षिण पश्चिम मानसून की दीर्घकालीन प्रवणता हर 33-35 वर्षों में उच्च गहनता और इसके बाद कम गहनता का संकेत देती है (चित्र 2 देखिए)। यह इतना सुस्पष्ट नहीं होने पर भी बारिश की गहनता में दशकीय प्रवणता देखी जा सकती है। केरल में मानसून की तारीख जून 1 या 2 है फिर भी इस में अंतरवार्षिक परिवर्तन है।

तारली स्टॉक और बारिश की गहनता

बारिश की गहनता और कम गहनता तारली स्टॉक के पुनरुज्जीवन पर प्रभावित होता है। जीवंत संपदा होने के नाते मानसून के दोनों याने कम और अधिक दशाओं के प्रति तारली की प्रतिक्रिया होने में 6-7 वर्षों का समय लगता है। यह मछली का जन्म होना, आहार की उपलब्धता, बढ़ती और अंडजनन सफलता का सम्मिश्र प्रभाव है। मानसून की गहन दशा में सकारात्मक प्रभाव और दूसरी दशा के दौरान विपरीत प्रभाव देखा जा सकता है। वर्ष 1994 में 47,000 टन का सबसे निम्नतम पकड प्राप्त हुई थी और इस के बाद छः वर्षों की अवधि में स्टॉक वर्धन में तेज़ वृद्धि हुई और वर्ष 2000 में 3.67 लाख टन का श्रृंग उत्पादन प्राप्त हुआ। यह वर्ष 1990-95 अवधि के दौरान मिली गहन मानसून दशा का संकेत सूचक है। इससे पहले वर्ष 1968 में भी इसी तरह के गहन मानसून के समय 3 लाख टन की उच्चतम श्रृंग पकड प्राप्त हुई थी। निम्नतम गहनता के मानसून के समय कम उत्पादन प्राप्त हुआ था। (चित्र-1) बारिश और तारली उत्पादन की प्रवणता के आधार पर मात्स्यिकी के पूर्वानुमान की व्यवस्था विकसित की जा सकती है।

मलबार सोल और बारिश

मलबार सोल के उत्पादन की प्रवणता और बारिश के बीच निकट संबंध है। अस्सी के वर्ष के आरंभ में आलप्पी और निकटवर्ती तटीय क्षेत्र में जब छोटे आनायकों के आविष्कार और उनकी बेडाओं की संख्या बढ़ती रहती थी तब मलबार सोल का उत्पादन भी बढ गया।

मलबार सोल और मानसून का प्रारंभ

देश की अर्थव्यवस्था में साधारण मानसून के बावजूद मानसून प्रारंभ होने की तारीखें भी प्रमुख रूप से प्रभावित होती हैं। कृषि/मात्स्यिकी, पेय जल की उपलब्धता और जलविद्युत-ऊर्जा का उत्पादन आदि मानसून पर आश्रित हैं। सामान्यतः प्रतिवर्ष मानसून की शुरुआत जून 1 या 2 तारीखों में होती है, लेकिन इसमें परिवर्तन भी होता है। मानसून के प्रारंभ के समय श्रेणी आंकडे (1956 से 1996 तक) और मलबार सोल के वार्षिक उत्पादन की तुलना की गई थी। मानसून का प्रारंभ जल्दी होने पर सकारात्मक प्रभाव देखा गया है। मानसून के देर से आने के समय की अपेक्षा जल्दी आने पर मात्स्यिकी में भी वृद्धि हुई है (चित्र 3)।

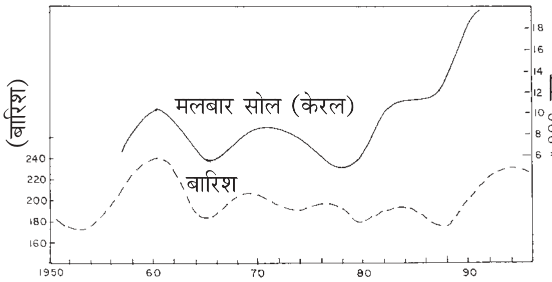

चित्र 3. केरल में मलबार सोल के उत्पादन और बारिश के बीच का संबंध

उत्पादकता में तारली और मलबार सोल का दशकीय संबंध

यह रोचक की बात है कि इन दोनों जातियों के वार्षिक उत्पादन में दशकीय प्रवणता की समानता दिखाई पडी है। तारली वेलापवर्ती मछली है और मलबार सोल तलमज्जी मछली है। पहली मछली खाद्य श्रृंखला के प्राथमिक उत्पादन पर आश्रित होकर चरनेवाली है बल्कि दूसरी मछली मुख्यतः मल पदार्थ और नितलस्थ जीवों को खोनेवाली है। ये दोनों विभिन्न पोषण स्तर की मछलियाँ है। बेहत्तर प्राथमिक और द्वितीय उत्पादन के समय (बारिश, उत्स्रवण और नदी बहाव से पोषण वस्तुओं की

उपलब्धता होते समय) मृत और सडे हुए प्लवकों की उपलब्धता होते समय) मृत और सडे हुए प्लवकों से समुद्र का नितलस्त भाग समृद्ध होता है जिसकी वजह से सूक्ष्म तथा स्थूल जीवों की बढ़ती और प्रचुरता में अनुकूल पड़ती है। यह स्थिति मलबार सोल केलिए अनुकूल पड़ती है। अतः ये दोनों जाति मछलियाँ अनुकूल वातावरण की हितकारियाँ है। इन दोनों मछलियों के दशकीय उत्पादन में समान प्रवणता की झलक देखी जा सकती है।

पर्यावरणीय परिवर्तन और भारी मृत्युता

पर्यावरण में होनेवाले परिवर्तन से मछली जातियों पर विरुद्ध प्रभाव पड़ता है। हाल ही में कोचीन के पश्चजल में हुई तारलियों की भारी मृत्युता इसका उदाहरण है। दिसंबर, 2004 के महीने के मध्य में तारलियों के छोटे छोटे झुंडों ने कोचीन के पश्चजल में प्रवेस किया। तब से लेकर जून, 2005 तक स्थानीय मछुआरों ने इन्हें आसानी से पकडकर बहुत आम कमाई। तब पश्चजल की लवणता 17-25 पी पी टी के बीच परिवर्तित थी। लेकिन जून के दूसरे सप्ताह से लेकर जब बारिश तेज़ होने लगी तो पश्चजल के आंतरिक भागों में तारलियों की भारी मृत्युता होने लगी।

इसी समय पानी की लवणता 3.6-2.6 पी पी टी तक कम हो गई। लवणता के इस स्तर में तारली जीवित नहीं रह सकती। सडी हुई तारलियों की वजह से पानी में विलीन ऑक्सिजन की मात्रा, जो पहले बहुत उच्च भी, 5 से 1.62 मि.लि. $^{-1}$ तक घट गई। लेकिन यहाँ रोचक बात यह थी कि पश्चजलों में रहने वाली मछलियों पर कम लवणता का प्रभाव नहीं पडा है। इन में अधिकांश मछलियाँ सुरक्षित स्थानों में बच गयी।

मानवीय हस्तक्षेप की भूमिका और भारी मृत्युता

वास्तव में अष्टमुडी और कोचीन जैसे पश्चजलों में मानसून के समय तारलियों का प्रवेश करना पहले की घटना नहीं है। स्टॉक की प्रचुरता होने पर पहले भी इस तरह तारलियाँ आयी थी। लेकिन मानवीय हस्तक्षेप से भारी मृत्युता हुई है। पश्चजलों के आंतरिक भागों में स्थित द्वीपों के बीच रोड के निर्माण के लिए कई स्थानों में बांध बनाए गए हैं। इस वजह से पानी का बहाव रुका गया और पानी की लवणता भी घट गयी। ऐसे कम लवणीय क्षेत्रों में फँस गई तारलियों की भारी मृत्युता हुई थी (चित्र 4)। दूसरी तरफ कह जाएं तो यह पश्चजल आवास व्यवस्था का संतुलन कायम रखने के लिए प्रकृति का अपने आप संवारने की रीति है।

चित्र 4. कोचीन के पश्चजल चेप्पनम में तारलियों की भारी मृत्युता का दृश्य

मुख्य शब्द/Keywords

वेलापवर्ती - pelegic fish
पुनरुज्जीवन प्रक्रिया - resucitation process
चपटी मछली (उदा. मलबार सोल) - flat fish
उत्स्रवण - upwelling
किसी मछली जाति का झुंड - school of species

एल नीनो और समुद्री पर्यावरण तंत्र में इसका प्रभाव

एन.जी.के. पिल्लै और के.जे. तारा
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन, केरल

एल नीनो (*EL Nino*) भूमध्यीय पूर्वी पसिफिक के पेरु और इक्वडोर के तटों में क्रिसम के आसपास होनेवाला एक व्यापक महासागरीय तापन है। इस प्रतिभास को इक्वडोर और पेरु के मछुआरों ने *एल नीनो* नाम से अभिहित किया जिस से विवक्षा बाल क्रैस्ट है क्योंकि यह क्रिसमस के आसपास के दिनों में शुरू होता है। यह कई महीनों तक रहता है। महासागरीय और वायुमंडलीय पहलुओं से यह परिघटित होता है। मौसमिक हवा (ट्रेडविंड) निर्बल होने पर यह घटित होता है। 2-7 वर्षों के अंतराल में यह प्रतिभास होता है, फिर भी 3-4 वर्षों में एक बार यह होता रहता है। यह परिघटना 12-18 महीनों तक बनता रहेगा और इसके साथ दक्षिण ओसिलेशन (SO) में बडा दोलन होता है, जो कि पूर्वी और पश्चिमी अर्धगोलों के बीच उष्णकटिबंधीय समुद्र तल दाब में होनेवाला अन्तर्वार्षिक उतार चढाव है। यह परिघटना तकनीकी तौर पर *एल नीनो सथेर्न ओसिलेशन* (ENSO) नाम से जाना जाता है।

एल नीनो के दौरान आम तौर पर दक्षिण उष्णकटिबंधीय पसिफिक और भारत महासमुद्र में असाधारण उच्च वायुमंडलीय समुद्र तल दाब विकसित होता है जबकि दक्षिणपूर्व उष्णकटिबंधीय पसिफिक में असाधारण निम्न समुद्र तल दाब। इन दोनों दाब प्रणालियों के बीच के अंतर को दक्षिण ओसिलेशन इंडक्स (SOI) नामक इंडक्स में परिणत किया। *एल नीनो* का संबंध सथेर्न ओसिलेशन इंडक्स का नेगटीव फेस से है। *ला नीना* (*La Nina*) में शीत-पानी की परिघटना होती है जो सथेर्न ओसिलेशन इंडक्स का पोसिटिव फेस है।

साधारणतः *एल नीनो* न होने पर मौसमिक हवा (भूमध्य रेखा की ओर बहनेवाली हवा), पूर्वी पसिफिक के तटीय जलों को पार करते हुए पूर्व से दक्षिण की ओर बहती है। ऐसे बहने पर यह हवा भूमध्य रेखा के पास स्थित पसिफिक समुद्र के सतही गरम पानी को अपने साथ बहाया जाता है। सतही गरम पानी का इस प्रकार बह जाने पर तुरंत नीचे के परत का पानी अपनी जैव संपदाओं के साथ ऊपर उड आता है। ऊपरी सतह के पानी की तुलना में उत्स्रवित (उडा) पानी ठंठा होता है। ऐसे उत्स्रवित पानी में पौष्टिक लवणों की मात्रा ज्यादा देखा जाता है। उत्स्रवण होनेवाले क्षेत्र उच्च जैवीय उत्पादकतायुक्त देखा गया है।

आम तौर पर विश्व के अत्यधिक उपजाऊ मछली घरोहर इन क्षेत्रों में देखा गया है। पेरुविया के समुद्र ऐसे उत्स्रवण के कारण अत्यधिक उपजाऊ है। कुछ अवसरों पर सामान्य मौसमिक स्वरूपों में शिथिलता आने पर भूमध्यीय हवा उलटी दिशा में बहने लगेंगे तब उसके साथ पानी ऊपरी सतह का कम पौष्टिक पेरु के दक्षिण से पूर्व की ओर बह जाता है। यह *एल नीनो* का कारण बन जाता है। *एल नीनो* के दौरान पूर्व से पश्चिम की ओर बहनेवाली भूमध्यीय हवा में मंदता आने से गहरे समुद्री पानी का उत्स्रवण नहीं होता है।

महासागरीय और मौसमिक प्रक्रमणों के संयोजित प्रभाव से *एल नीनो* का आविर्भाव होता है। लेकिन पूर्वी पसिफिक महासागर में यह नियमित दिखाया पडता है। एल नीनो के दौरान

पत्रव्यवहार : डॉ. एन.जी.के. पिल्लै, प्रधान वैज्ञानिक व प्रभागाध्यक्ष, पेलाजिक फिशरीस डिविज़न, केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान पी.बी. सं. 1603, एरणाकुलम नोर्त पी.ओ., कोचीन - 682 018, केरल

मौसमी पार्टर्न, ताप-प्रवणता और उत्स्रवण में व्यतियान होता है। भारी वर्षा और गरम जलवायु ने पेरु की एंचोवी मात्स्यिकी पर बडा आघात किया है। दक्षिण अमेरिका तटों में समुद्र तलीय और समुद्र सतही तापमान बढने पर ताप प्रवण स्तर गहरे तल की ओर धकेल दिया जाता है। भारतीय उपमहाद्वीप में *एल नीनो* के कारण वर्षा कम होती है। *एल नीनो* का थोडा सा प्रभाव भारतीय महासागर में भी होता है। *एल नीनो* के दौरान पानी का उडन (उत्स्रवण) ताप प्रवण स्तर के ऊपर होने के कारण सतह में पौष्टिक पानी की आपूर्ति में कमी होने की वजह से दक्षिणपूर्व पसिफिक में जीवप्लवकों का नाश होता है। प्लवकजीवों का नाश खुले समुद्र के वेलापवर्ती मछलियों पर बुरा असर डालता है क्योंकि ये इन प्लवकजीवों को खाकर जीते हैं। इस समय अधिक उपजाऊ क्षेत्रों की ओर मछलियों का प्रवास होने के कारण इक्वडोर, पेरु और चिली में मछलियों का अकाल होता है। अतः *एल नीनो* के दौरान मछली झुंडों की कमी से मत्स्यन में कमी आ जाती है। तापप्रवण स्तर के साथ उसके नीचे के पौष्टिक शीत पानी भी गिर जाने पर एंचोवी मछलियाँ नीचे दब जाना या मर जाना दिखाया पडा था (1972 में हुए *एल नीनो* के दौरान एंचोवी मछलियों का उत्पादन 20 मिलियन टन से 2 मि. ट. में गिर गया)। परिणामस्वरूप एंचोवी मछलियों को खाकर जीनेवाले समुद्री चिडियों की संख्या में कमी दिखाई पडी।

एल नीनो के जैविक समाघात

पानी का उत्स्रवण रुक जाने से पूर्वी भूमध्यीय पसिफिक तटीय क्षेत्र और, पेरु के तटीय क्षेत्र में प्राथमिक उत्पादकता में नाटकीय घटती दिखाई पडती है।

- उत्स्रवण के दौरान उडनेवाले पौष्टिकों में पलनेवाले पादपप्लवों की जीवसंख्या में घटती दिखाई पडती है। इसे खाकर जीनेवाली एंचोवी मछलियों में घटती और प्रवास दिखाया पडता है।
- प्रवाल जीवियाँ शीतल पानी पसंद करनेवाली हैं, *एल नीनो* होनेवाले गरम पानी से उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों की प्रवाल झाडियाँ नष्ट होते हुए दिखाया पडता है। इस ताप से प्रवालों का विरंजन और जीवों का नाश होता है।
- एंचोवी मछलियों के नाश से पेरुविया के तटों में पक्षियों की भारी मृत्यु हुई। एल नीनो के पूर्व और बाद में जल मुर्गों के उत्पादन में बडी कमी हुई।
- *एल नीनो* के दौरान होनेवाले सतही गरम पानी में पादपप्लवकों का बढत कम होने से समुद्री खाद्य श्रृंखला में मंदता आती है जिसके कारण मछलियाँ और अन्य समुद्री जीव खाद्य की खोज में अथाह पानी में तैर जाता है। खाद्य की खोज में समुद्री चिडियाँ तितर-बितर हो जाती है।
- इक्वडोर और पेरु की मुख्य समुद्री संपदा एंचोवी मछलियाँ शीत व उपजाऊ पानी की ढूँढ में तैरकर भागने पर चिली के मछुआरे इन्हें पकडते हैं। नोर्थ अमरिका के दूरस्थ उत्तर भागों में विदेशज गरम पानी मछलियाँ देखने लगती हैं।

इस प्रकार मछलियों के वितरण व प्रचुरता पर प्रभाव डालनेवाले बाह्य और जैविक व्यतियान *एल नीनो* के साथ घटित होता है। *एल नीनो* के बाद दिखाई पडनेवाली महासागरीय विशेषताएं समुद्रोपरितल तापमान में परिवर्तन, महसागर के ऊर्ध्वाधर तापीय स्वरूप में परिवर्तन और तटीय और उत्स्रवित तरंगों में व्यतियान हैं। समुद्री संपदाओं के प्रचुरता और जाति संघटन में इन परिवर्तनों का सीधा प्रभाव होता है। *एल नीनो* के कारण उत्तर गोलार्ध में उष्णकटिबंधीय गरम पानी में बसनेवाली मछलियाँ अधिकाधिक उत्तर दिशा की ओर तैरते-दिखाई पडीं। शीत-पानी की मछलियाँ उत्तर की ओर या अधिक गहराई की ओर बढती दिखाई पडीं। ऊपरी तल और स्तंभाकार (कॉलम) में समुच्चयन (स्कूलिंग) करनेवाली मछलियाँ अधिकाधिक गहराई की ओर बढ गई। *एल नीनो* घटित क्षेत्रों की मछलियों की बढत,

पुनरुत्पादन और अतिजीविता में कमी दिखाई पडीं।

वर्ष 1997 में हुए *एल नीनो* की सारी घटनाएं इस से पहले कालिफोर्णिया, ओरिगोन और वाशींगटन के तटों और अलास्का खाडी व. बिंरिंग समुद्र में हुए *एल नीनो* के समान रहीं। इन समयों में येलो टेल, पसिफिक बोनिटो और अलबकोर मछलियाँ उत्तरी पसिफिक की ओर तैरती दिखाई पडी। साधारणतया उपतट में रहनेवाली इन मछलियों का, दूर अपतट (100 मी) में प्रत्यक्ष होना विशेष परिघटना है। ट्यूना कुटुम्ब की मछलियाँ जैसे पसिफिक और स्किपजाक माकेरल भी उत्तर की ओर बढती दिखाई पडी। आसपास के क्षेत्रों में आम तौर पर दिखाई न जानेवाली मछलियाँ जैसे वैटबेइट स्मेल्ट, थ्रेशर शार्क, ट्रिगर फिश, स्पोट्टड कसकील, पसिफिक सोरी, आम डॉलफिन, वाइट सीबास, फानटेल रागफिश, हाफमून, महासागरीय सनफिश (सूर्यमीन), बारकुडा, कालिफोर्णिया टंगफिश और कालिफोर्णिया लिज़ार्ड फिश दिखाई पडी।

परंपरागत रूप से मिलनेवाली वाणिज्यिक मछलियों की कमी *एल नीनो* से होनेवाला बुरा परिणाम है। उदाहरण केलिए कालिफोर्णिया में बडी माँग रही स्क्विड मछलियाँ इस समय उत्तरी सर्द पानी की ओर तैरने से कम मिल जाती है। रोक मछलियाँ भी इस प्रकार गहराई की ओर या उत्तरी दिशा की सर्द पानी की ओर प्रवास करती है। पसिफिक वाइटिंग मछली भी इसी प्रकार अपने अंडजनन-अशन क्षेत्रों से भागकर शीतोष्ण मेखला की ओर तैर जाती है। *एल नीनो* के कारण पसिफिक सालमण की आवास स्थिति बदल जाती है जिस से बढत में मंदता और वर्द्धित मृत्यु देखी गयी है।

पश्चिमी भूमध्यीय पसिफिक गरम पूल विश्व के सब से गरम पानी महासागरीय क्षेत्र है। यहाँ प्राथमिक उत्पादकता दर सब से कम होने पर भी स्किपजाक ट्यूना की उच्च पकड मिलती है। *एल नीनो* के दक्षिणी ओसिलेशन का कारक यह गरम पूल है। दक्षिणी पसिफिक में *एल नीनो* अवस्था के दौरान जन्तुप्लवकों की पुष्टि होती है जिस पर ट्यूना मछलियाँ अच्छी तरह पलती है। अतः *एल नीनो* का पूर्वानुमान होनेवाले क्षेत्रों से भारी मात्रा में ट्यूना पकड की साध्यता होती है।

प्रवाल झाडियाँ उच्चतम पानी तापमान सह्यता क्षेत्रों में दिखाई पड रही है। 1997-1998 के दौरान हुए *एल नीनो* में व्यापक रूप से प्रवालों का जो विरंजन हुआ इनके तापमान सह्यता सह संबंध को दिखाता है।

महासागर हमेशा एकरूपी और स्थिर नहीं है। *एल नीनो* सूक्ष्म आवासीय तंत्रों और मछली वितरण में होनेवाला परिवर्तन निर्धारित करने का अवसर प्रदान करता है। मछली वितरण और जाति समृद्धि अध्ययन इनकी आवास व्यवस्थाएं समझने केलिए सहायता प्रदान करेगा जिस से इन संपदाओं का अच्छा प्रबंधन साध्य हो जायेगा।

मुख्य शब्द/Keywords.

मौसमिक हवा - trade wind (भूमध्य रेखा की ओर बहनेवाली हवा)
दक्षिण ओसिलेशन - (S.O.) South Oscillation
दोलन - swing
ENSO - *EL Nino* Southern Oscillation
दाब - pressure
SOI - Southern Oscillation Index
ला नीना - *La Nina*
समाघात - biological impact
समुच्चयन - schooling

गंगा नदी क्षेत्र में भारी धातुओं की मात्रा का मापन व स्वर्णिम भविष्य

सीमा बंगवाल, दीपक कोठियाल, सीमा ढ़ोढ़िटाल
गो.ब. पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पन्तनगर, उत्तराँचल

"जल ही जीवन है"! यह महत्वपूर्ण सूक्ति मनुष्य सदियों से कहता और सुनता चला आ रहा है। दाह जल ही है जो पृथ्वी पर जीवन सफल हो पाने का एक मात्र सम्भव कारण है जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण है - जल के अभाव में चन्द्मा पर जीवन का सफल न हो पाना। पौराणिक कथाओं के अनुसार भी पृथ्वी पर जीव की प्रथम उत्पत्ति जल में मछली के रूप में मानी गयी है, इस से यथासम्भव अनुमान लगाया जा सकता है कि प्राचीन काल की मान्यतायें भी जल, मछली और जीवन के त्रिकोण को सफल मानती आयी हैं। यद्यपि जल इस ग्रह का सर्वाधिक उपलब्ध संसाधन है तथापि यह मानव के लिये तीव्र गति से दुर्लभ होता जा रहा है। जल सम्पदा का अधिकाधिक दुरुपयोग निरंतर विकास व पर्यावरण संरक्षण के लिये खतरा पैदा कर रहा है। वह दिन दूर नहीं जब सर्वदा पानी से घिरी इस पृथ्वी पर पेयजल के लिये त्राहि मच उठेगी। यह एक बड़ी त्रासदी है कि निरंतर बढ़ती आबादी, कटते जंगल, बढ़ती आवासीय समस्या तथा प्राकृतिक आपदाओं के कारण पर्याप्त विकास के बावजूद भी करोड़ों लोग पानी जैसी मूलभूत आवश्यकताओं से वंचित हैं। पेयजल की इस प्रकार की अनुपलब्धिता मानव जाति के लिये एक प्रश्न चिह्न बना हुआ है और इसका समाधान भी हमें ही ढूँढना होगा क्योंकि इसके लिये पूर्णतः हम स्वतः ही उत्तरदायी हैं और इसका कारण है मनुष्य द्वारा अपनी आवश्यकता की पूर्ति हेतु विभिन्न कारकों द्वारा जलप्रदूषण को विकसित करना।

पत्रव्यवहार : श्रीमती सीमा बंगवाल
मत्स्यविज्ञान महाविद्यालय,
गोबिंद वल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी
विश्वविद्यालय, पन्त नगर, उत्तराँचल

जल एक अभूतपूर्व प्राकृतिक संसाधन है जिसका उपयोग सभी जीवधारी करते हैं। प्रकृति हमें प्रतिवर्ष 40 करोड़ हेक्टेयर जल प्रदान करती है। इसमें से अनुमानित 7.0 करोड़ हेक्टयर पानी सूर्य के ताप द्वारा बाष्पित होकर वायु में मिल जाता है, 11.5 करोड़ हेक्टेयर पानी नदियों व अन्य जलस्रोतों द्वारा ले लिया जाता है तथा शेष 21.5 करोड़ हेक्टेयर धरती द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है। अनुमान है कि वर्तमान समय में लगभग 40 घनकिलोमीटर पानी फसलों को सींचने में, 25 घनकिलोमीटर घरेलू कार्यों में एवं 15 घनकिलोमीटर पानी उद्योगों, तथा 19 घनकिलोमीटर पानी ऊर्जा के क्षेत्र में प्रयोग किया जाता है। विभिन्न प्रकार के औद्योगिक इकाइयों के क्रियाशील रहने से अलग अलग प्रकार के रासायनिक तत्व एवं भारी धातुएं पानी में मिल जाती हैं जिसकी वज़ह से जल में उपस्थित तत्व की मात्रा परिवर्तित हो जाती है तथा यह परिवर्तन ही एक उच्चतम प्रदूषक का रूप ले रहा है। मीठे तथा समुद्री दोनों प्रकार के ही जल में विभिन्न तत्वों की उपस्थिति रहती है जिनकी सान्द्रता नगण्य होती है। ये धातुएं विभिन्न आकस्मिकारक अवस्थाओं में पायी जाती हैं जिनमें अन्य धातुओं व रासायनिक तत्वों से क्रिया करने की अतुल क्षमता होती है जिसके परिणाम स्वरूप अनन्य रासायनिक उत्पाद बनते हैं। ये उत्पाद लाभदायक व हानिकारक दोनों प्रकार के ही हो सकते हैं। इन उत्पादों के गुण धर्म रासायनिक क्रिया करने वाले अभिकारकों पर निर्भर करते हैं। कुछ भारी धातुएं विभिन्न औद्योगिक इकाइयों व कल कारखानों द्वारा उत्पादित होते हैं जिनकी अभिक्रिया द्वारा विभिन्न

विषाक्त पदार्थों का उत्पादन होता है तथा जिनके सेवन से जीवधारियों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

मुख्यतः ये भारी धातुएं विभिन्न धातुअयस्कों के शुद्धिकरण, लेपन तथा विभिन्न रंग रंजन के निर्माण तथा कई अन्य औद्योगिक इकाइयों जैसे साबुन, प्लास्टिक, कृत्रिम रबड़, उर्वरक, औषधि, जीवाणु व कीटाणुनाशक पदार्थों व अनन्य माध्यमों से उत्पन्न होती हैं। इन औद्योगिक इकाइयों में निर्माण संयंत्र में प्रयुक्त होने वाले जल के साथ मिलकर ये धातुएं विभिन्न जलस्रोतों में मिल जाती है तथा वहाँ की पारस्थितिकी को प्रभावित करती हैं।

धातुओं के प्रकार

स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से हम धातुओं को मुख्यतः चार प्रकार में विभाजित कर सकते हैं।

- धातुएं जो जीवन के लिये अतिआवश्यक हैं।

  उदाहरणार्थ : Cu, Mn, Zn, Cr, Fe एवं Co.

- धातुएं जो जीवन के लिये अतिआवश्यक नहीं हैं।

  उदाहरणार्थ : Ba, Al, Li एवं जिरकोनियम

- धातुएं जो कुछ जीवन प्रक्रियाओं पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं।

  उदाहरणार्थ : Sn, As.

- धातुएं जो अत्याधिक विषैली हैं

  उदाहरणार्थ : Hg, Cd, एवं Pb.

राज्य में मत्स्य उत्पादन के दृष्टिकोणानुसार विभिन्न धातुओं का परीक्षण किया गया है जिसमें जलस्रोत में लगभग सभी धातुओं का तथा बाज़ार में आने वाली मुख्य मत्स्य प्रजातियों में मरकरी तथा लैड का परीक्षण किया गया जिसके महत्वपूर्ण तथ्य निम्नवत हैं।

सामान्य गुण धर्म

	मरकरी	लैड
अवस्था	भारी श्वेत, धातु	भारी, आघात वर्धनीय धातु
परमाणु	80	82
अपेक्षित परमाणु द्रव्यमान	200	207.19
गलनांक	-39°C	327.5°C
क्वथनांक	357°C	1740°C

मरकरी : मरकरी वातावरण में विस्तृत रूप से पायी जाती है किन्तु यह किसी भी जीव के लिये एक अनावश्यक धातु है। वैज्ञानिक अनुसंधान द्वारा इसकी मात्रा मीठे पानी के लिये 0.5 ppb एवं समुद्री पानी के लिये 0.1 ppb निर्धारित की गयी है। यह अपने ऐल्केलिक लवणों के रूप में अत्याधिक हानिकारक होती है।

लैड : यह गैलेना अयस्क के रूप में पायी जाती है। तथा विभिन्न पेट्रोलियम व औद्योगिक इकाइयों द्वारा जलीय वातावरण में पहुँच जाती है यह भी अत्यधिक हानिकारक धातु है।

भारी धातुओं का प्रभाव

जलीय वातावरण में पहुँचकर ये धातुएं विभिन्न जीवधारियों द्वारा शोषित कर लिये जाते हैं तथा पारस्परिक निर्भरता के कारण निम्न जैविक श्रेणि से उच्च जैविक श्रेणि की और अग्रसरित होकर उच्चतम जीवों में इसका एकत्रीकरण होता रहता है जो कि जीव श्रृंखला पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। इन प्रभावों में सामान्यतः उत्परिवर्तन, तथा विभिन्न शारीरिक रचनाओं की आस्थिरता महत्वपूर्ण है।

इस प्रकार इन प्रभावों को हम निम्न भागों में बाँट सकते हैं:

- म्यूटाजैनिक प्रभाव (उत्परिवर्तन कारक)
- कार्सिनोजेनिक प्रभाव (कैन्सर कारक)
- टिरैटोजेनिक प्रभाव (जन्म के समय विलक्षित)

ये सभी प्रकार की अवस्थाएं जीवधारियों में बायोएक्युमुलेशन तथा बायोमैग्निफिकेशन के द्वारा सम्मिलित होती हैं। तथा इन प्रक्रियायों को विभिन्न पारस्थितिकीय घटकों द्वारा अध्ययन किया गया है। (उदाहरणार्थ पौधों में, दूध में तथा जलीय स्थिति में)!

गंगा नदी के अनुसंधानित क्षेत्र

बद्रीनाथ से नरौरा (480 किमी.) के क्षेत्र के अध्ययन द्वारा यह ज्ञात किया गया कि उत्तरांचल में औद्योगिक इकाइयों तथा जनसंख्या के विस्तृत वितरण के कारण उत्तरांचल में इन इकाइयों द्वारा अन्य राज्यों की तुलना में बहुत ही अल्प मात्रा में धातुओं का मिश्रण हुआ है अथवा अध्ययनित नदी क्षेत्र में भारी धातुओं की मात्रा नगण्य तथा अतिरिक्त धातुओं की मात्रा अल्पतम प्राप्त हुई है।

अध्ययनित क्षेत्र का संक्षिप्त विवरण

	भागीरथी	अलकनन्दा
लम्बाई (कि.मी.)	212.5	192.0
जलीय तापमान (^{0}से.)	10-23	9.5-19.5
घुलित आक्सिजन (मिग्रा/ली.)	7.6-12.2	7.2-10.2
पी.एच.	6.5-7.5	7.0-8.2
मुक्त कार्बन डाई आक्साईड (मिग्रा/ली.)	0.75	1.2-3.6

विभिन्न स्थानों पर प्राप्त धातुओं की मात्रा

स्थान	धातुएं (ppm)						
	Fe	Co	Ni	Zn	Cd	Hg	Pb
• बद्रीनाथ	770	30	12	120	-	-	-
• नन्दप्रयाग							
नन्दाकिनी	302	12.55	21	108	7.45	-	-
अलकनन्दा	1134	6.65	35	117	7.70	-	-
• रुद्रप्रयाग							
मन्दाकिनी	1332	17.2	36.9	151	4.75	-	-
अलकनन्दा	1029	5.6	33.4	102	4.25	-	-
• श्रीनगर	1155	10.0	29.0	156	2.25	-	-
• देवप्रयाग							
भागीरथी	1351	10.0	43.0	7.9	2.9	-	-
अलकनन्दा	486	17.0	49.0	133	4.75	-	-
• ऋषिकेश	2223	14.0	30.0	98	6.50	-	-

राज्य की जल एवं मत्स्य सम्पदा के अध्ययनानुसार परिक्षण करने में सात शहरों की स्थिति का अध्ययन विभिन्न घटकों के आधार पर किया गया। जिसमें 1 से 5 तक की मूल्यांकन श्रेणि का प्रयोग किया गया है। इस अध्ययन को निम्न निर्देशांक के आधार पर समझा जा सकता है।

निर्देशांक

क. बिना उपचार के पेयजल का प्रयोग

ख. घरेलू कार्यों हेतू आपूर्ति

ग. कृषि कार्यों हेतू आपूर्ति

घ. औद्योगिक कार्यों हेतू आपूर्ति

ङ. मत्स्य उत्पादन हेतू आपूर्ति

1. अतिउपयुक्त
2. उपयुक्त
3. संतोषजनक
4. कम उपयुक्त
5. अनुपयोगी

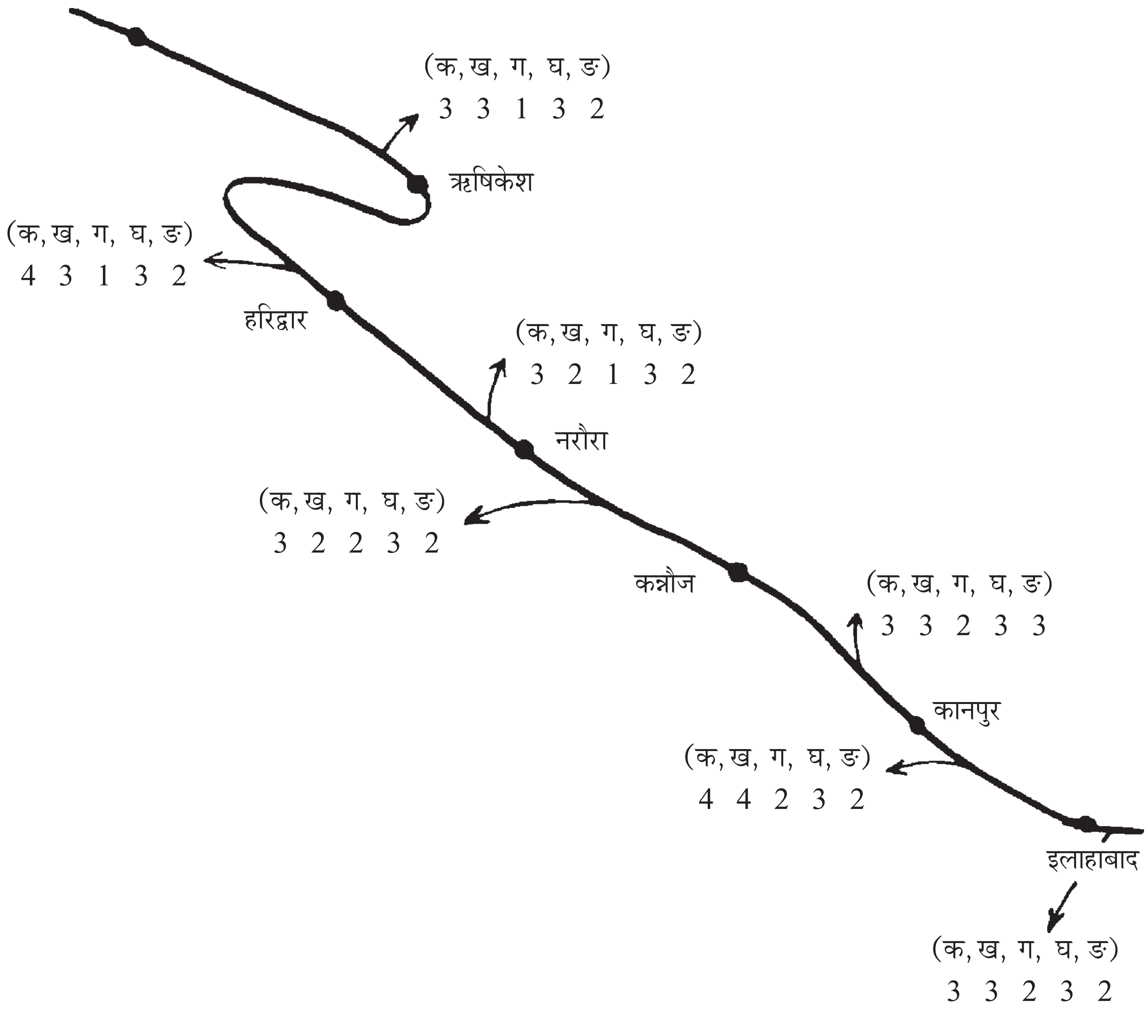

गंगा नदी की अध्ययनित स्थिति

उपरोक्त परीक्षणों के आधार पर राह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अध्ययनित गंगा जल संसाधन में सभी धातुओं की मात्रा अपनी उपयुक्त अवस्था में है तथा इसका मत्स्य संरक्षण व उत्पादन में अभूतपूर्व उपयोग किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त उत्तरांचल के बाज़ार में आने वाली मत्स्य प्रजातियों में भी भारी धातुओं की मात्रा अपने न्यूनतम स्तर पर पायी गयी है। अतः उत्तरांचल के बाज़ार में बेचीजाने वाली खाद्य मछलियों को ग्रहण करने से उपभोक्ता के स्वास्थ्य पर मरकरी व सीसे द्वारा कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की सम्भावना नहीं है जो उत्तरांचल के मत्स्य संरक्षण एवं पर्यावरणीय महत्व को ध्यान में रखते हुये मत्स्य विकास हेतू एक महत्वपूर्ण कदम है।

मुख्य शब्द/Keywords.

संसाधन - resource

जीवधारी - living thing

अयस्क - (कच्ची धातु) - ore

बयोएक्युमुलेशन - bio accumulation

बयोमैग्निफिकेशन - bio magnification

गभीर समुद्र : समाप्ति की चरम सीमा तक मत्स्यन?

रेखा जे. नायर
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन, केरल

भूमिका

विश्व मात्स्यिकी और जलकृषि 2000 के बारे में यू एन एफ ए ओ की रिपोर्ट यह व्यक्त करती है कि मात्स्यिकी के 72-78% तक विदोहित है, अतिविदोहन हो चुका है या समाप्त हो चुका है और विश्व की समुद्री आवास तंत्र का अधिकांश भाग "पूर्णतः विदोहन के निकट" है। अत्यंत चिंताजनक बात यह है कि अतिमत्स्यन के कारण महासागर और तटीय आवास तंत्र में कई परिवर्तन हुए हैं। यू एन एफ ए ओ द्वारा समाकलित 40 वर्ष की मत्स्यन पकड की डाटा की समीक्षा करते हुए पोली आदि ने वर्ष 1998 में यह आकलन किया कि समुद्री आवास व्यवस्था का औसत पोषी स्तर बडे सुरा, कोड, ट्यूना और स्वोर्ड मछली जैसे परभक्षियों के अतिमत्स्यन माने 'समुद्री खाद्य श्रृंखला का मत्स्यन' की वजह से घटती की प्रवणता की ओर है। वैसे समुद्री अकशेरुकियाँ जैसे सी कॉव, ड्यूगोंग 'समुद्री कच्छप, तिमि और अन्य समुद्री स्तनियों के अति मत्स्यन से तटीय आवास व्यवस्था में कई संरचनात्मक और व्यावहारिक परिवर्तन हुए हैं और कभी कभी ये परिवर्तन, पोषकों के बह जाना या भौगोलिक मौसम परिवर्तन जैसे प्रतिघातों में परिणत हो जाते है। तटीय मात्स्यिकी और आवास व्यवस्था अति मत्स्यन के भीषण में पड जाने की वजह से मत्स्यन उद्योग और समुद्री खाद्य उद्योग गभीर समुद्र की मछली जातियों की नई मात्स्यिकी और नया विपणन विकसित करने के उद्यम में लगे हुए हैं। इसके फलस्वरूप मत्स्यन पर एक नई समस्या उभर आयी है। वह समुद्री जैव विविधता पर हुई गंभीर भीषणी है जो उष्णकटिबंधीय वर्षा वनों सहित भौमिक जैव विविधता की तुलना में अत्यधिक गंभीर और जटिल देखा गया है। अब मत्स्यन उद्योगों द्वारा लक्षित किए जाने वाले नए क्षेत्रों में प्रमुख है गभीर सागर।

भूमंडल के गभीर सागरों की सीमा नहीं है। कुछ समय पहले यह धारणा थी कि गभीर सागर जो भौमोपरितल के आधा भाग से अधिक है, ठंड और अंधेरा पानी में बहुत कम जीव मौजूद हैं। लेकिन आज नई प्रौद्योगिकियों के सहारे से वैज्ञानिकों को यह अवगाह मिला कि गभीर सागर बहुजाति जीवों, जिनमें अधिकांश का पहचान नहीं किया गया है, से भरपूर है, वैज्ञानिकों का कहना है कि गंभीर सागर में 10 मिलियन से ज्यादा जाति जीव मौजूद है - यह जैवविविधता विश्व के समृद्ध उष्णकटिबंधीय वर्षा वन की तुलना में बहुत अधिक है। गभीर सागर की जैवविविधता मुख्यतः समुद्री गिरियों पर केन्द्रित होती है। समुद्री गिरियाँ सागर के नीचे के पर्वत है और ये समुद्री तल से 1000 मीटर या इस से अधिक ऊँचा होते हैं लेकिन समुद्रोपरितल से ऊँचे नहीं है - सागर की नीलिमा में बैठे हुए भीमाकार समुद्री दानव है। इन पर्वतों का व्यापक रूप से मानचित्रण नहीं किए जाने पर भी यह आकलन किया जाता है कि विश्व में लगभग 30,000 और 1,00,000 के बीच समुद्री गिरियाँ हैं। बाहिक रूप से ये रोचक होने के साथ साथ कुछ समुद्री गिरियाँ खाद्य की दृष्टि से भी समृद्ध हैं। समुद्री गिरियों की बाहिक विशेषताओं और चारों ओर के शक्त तरंगों के कारण ये प्लवकों से संपुष्ट हैं। प्लवक असंख्य समुद्री जीवों को आकर्षित करते है मछलियों

पत्रव्यवहार : श्रीमती रेखा जे. नायर, वैज्ञानिक,
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान,
पी.बी.सं 1603, एरणाकुलम नोर्थ पी.ओ.,
कोचीन, केरल

और महासागर के अनेक वेलापवर्ती और प्रवासी मछलियों को खाद्य और प्रजनन धरातल प्रदान करते हैं। डोल्फिन और तिमि जैसे बडी समुद्री स्तनियों से लेकर विभिन्न मछली जातियों और उनको खाने वाले पक्षियों को और कई विदेशज स्पंजों और सूक्ष्म जीवाणुओं को भी समुद्री गिरि आवास प्रदान करते हैं अतः यह समुद्री जीवजातों का खजाना है। गभीर समुद्र विभिन्न जाति प्रवालों का आवास केन्द्र भी है। उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय गरम पानी के अलावा प्रवाल कई दस लाख वर्षों से गहरे, अंधेरे और ठंड पानी में भी बसते हैं। ठंडा पानी में रहनेवाले जीवंत प्रवालों को कार्बन डेटिंग से यह ज्ञात हुआ कि लगभग 5,000-8,000 वर्षों से ज्यादा आयु वाले प्रवाल मौजूद है।

मत्स्यन और गभीर सागर आवास व्यवस्था में इसका संघात

गभीर सागर के नितलस्थ मत्स्यन के लिए मुख्यतः तीन आनायकों - गिलजाल, लंबी डोर और नितलस्थ आनायक का प्रयोग किया जाता है और ये तीन आनायक समुद्र के प्रवालों और अन्य जीवों पर कुछ न कुछ हद तक संघात डालनेवाले हैं। नितलस्थ आनायन में भारी जंजीरों, जालों और स्टील प्लेटों के खींचने से महासागर के नितलस्थ भाग में बहुत अधिक क्षति पहूँच जाती है और विश्व में इस आनायक का बडे पैमाने में प्रयोग किया जाता भी है। इस वजह से इस आनायक का प्रयोग गभीर सागर के नितलस्थ भाग की जैव विविधता और आवास व्यवस्था को एक चिंताजनक भीषणी है।

गभीर समुद्र में नितलस्थ मत्स्यन से होने वाले पर्यावरणीय और आवासीय संघातों को दो प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है, एक यह है कि गभीर समुद्र की खाद्य श्रृंखला के निम्न ऊर्जा स्तर में से जीवसंख्या के सिंह भाग (मछली जीव संख्या) निकाल हो जाता है। दूसरा संघात सभी महासमुद्रों की समुद्र गिरियों और महा द्वीपीय ढालों, गहराइयों और पीठों की आवास व्यवस्था में रहनेवाले जीवों जैसे प्रवाल, स्पंज और अन्य निस्यंद भोजियों का नाश है। बहुत धीमी गति में बढ़ने वाले इन विशेष जीवों का एक बार नाश होने पर फिर से ठीक होना या क्षतिपूर्ति होना असंभव है और इस के लिए दश या शत वर्षों का समय लगता है। प्रवाल और स्पंज जैसे विशेष जीव स्थिर स्थानों में रहनेवाले है और इनका नाश होने पर पुनःजीवित होने के लिए बहुत समय लगेगा। गभीर सागर के प्रवाल, स्पंज मछली, कवचप्राणी और अन्य जीव जातियाँ असाधारण रूप से पायी जानेवाली और स्थानिक हैं। आनायाकों के हर एक परिचालन से इन का व्यापक नाश होता है।

उत्तर अमरीका यूरोप के स्कान्डिनेविया से नोर्तेन स्पेइन और आस्ट्रेलिया के गभीर सागर और न्यूसिलान्ड के पास की समुद्र गिरियों में रहनेवाले प्रवालों पर विचारणीय क्षति पहूँच हुई है। उदाहरण के लिए नोरवीजियन समुद्र में गभीर सागर की प्रवाल भित्तियों का एक तिहाई या आधा भाग नितलस्थ आनायन की वजह से नष्ट हो गया है। आस्ट्रेलिया के वैज्ञानिकों ने आनायक बेडाओं द्वारा मत्स्यन करने के बाद के समुद्र गिरि क्षेत्रों का सर्वेक्षण किया है इससे व्यक्त हो गया है कि गभीर सागर प्रवालों, स्पंजों और वहाँ की आवास व्यवस्था के विशिष्ट नितलस्थ जीवों का 95% आनायन के बाद पूरी तरह निकाला गया है। उन स्थानों में सिर्फ चट्टान ही बाकी पड गए हैं। समुद्र गिरियों के जीव अचल स्वभाव और समुद्र गिरियों के चारों ओर रहनेवाले नितलस्थ जीवों को पकडने की आनायकों की प्रवणता के कारण गभीर सूक्ष्म जीवों पर सुरक्षा उपाय न लेने पर इस असंख्य और अनमोल जैव विविधता का पूरा नाश होने की संभवना है।

अगले कई दशकों के दौरान गभीर सागर नितलस्थ मत्स्यन बढ़ता रहेगा क्योंकि बडे बडे औद्योगिक सेक्टर गभीर सागर संपदाओं के मत्स्यन पर ध्यान देते रहते हैं। इसका मुख्य कारण तटीय समुद्र की संपदाओं की कमी से गभीर सागर मछलियों की माँग है। साधारणतः गभीर सागर की समुद्र गिरियों से विदोहन की जानेवाली मछली जातियाँ है ओरंज रफी,

अलफोन्सिनो और गभीर सागर लाल मछली और इनके लिए एक बाज़ार भी तैयार है। गभीर सागर की समुद्र गिरियों से मत्स्यन अभी अभी शुरू हुआ है। फिर भी इस मात्स्यिकी के लिए विशेष प्रौद्योगिकी और बाज़ारों का विकास किया जा रहा है। विकासात्मक जीवविज्ञान की दृष्टि से समुद्र गिरियों में स्थानिक समुद्र जीवों का नाश जैवविविधता के व्यापक नाश के समान है। इन पैतृक संपत्तियों का नाश दशकों या पीढियों या सैकड़ों या मिलियन वर्षों से भी मापना मुश्किल है।

गभीर सागर की समुद्र गिरियों का मत्स्यन स्थानीय मछुआरों के लिए मान्य नहीं है (चाहे यह उथले जल की समुद्र गिरियों से होने पर भी)। गभीर सागर नितलस्थ मत्स्यन मुख्यतः कुछ औद्योगिक स्तर से विकसित देशों के बडे बडे प्रौद्योगिकी युक्त आनायकों द्वारा किया जाता है। इस तरह पकडी गयी मछलियाँ भौगोलिक खाद्य पूर्ति के लिए उपयुक्त नहीं की जाती हैं बल्कि विकसित देशों के उच्च मूल्यवाले बाज़ारों में पहूँची जाती है। फिर भी समुद्र गिरियों की मात्स्यिकी का आर्थिक मूल्य भौगोलिक व्यवहार में नगण्य है। इन स्थानों में मत्स्यन करने वाले आनायकों की संख्या कम है, शायद कुछ दर्जनों के बराबर है। फिर भी अतिमत्स्यन करने की प्रौद्योगिकी क्षमता और बाज़ारों की सुविधा, विज्ञान से भी तीव्र गति से बढ़ती जा रही है और इनका नियमन करने केलिए आवाज़ उठाने का समय आ गया है।

परिरक्षण उपाय

समुद्री जैव विविधता के संरक्षण का न्यायिक दायित्व यू एन सी एल ओ एस, 1995 का यू एन फिशरीस एग्रिमेन्ट और अन्य औजारों के बीच जीवविज्ञानीय विविधता के संयोजन के द्वारा स्थापित किया गया है। गभीर सागर क्षेत्रों से नितलस्थ मत्स्यन करने के संघातों से जैवविविधता को संरक्षित करने के अनुरूप अंतर्राष्ट्रीय नियम में परिवर्तन किया जा सकता है। अनन्य आर्थिक मेखला के बाहर जैव विविधता के संयोजन का कार्य लागू नहीं किया जा सकता है। अंतर्राष्ट्रीय समुद्रतट अथोरिटी का अंतर्राष्ट्रीय समुद्र की जीवंत समुद्री संपदाओं के शोषण पर अधिकार नहीं है। वर्ष 1995 का यू एन मात्स्यिकी करार में गभीर सागर की फैली गयी मात्स्यिकी और प्रवासी मछली स्टॉक पर बताया जाता है बल्कि गभीर सागर में दिखाई पड़ने वाली पूरी मात्स्यिकी संपदाओं पर नहीं बताया जाता है। गभीर समुद्र की जैव विविधता को मत्स्यन और संरक्षण पर नियंत्रण करने के लिए न्यायिक प्रावधान लागू है। मानव की गतिविधियों के प्रति गभीर सागर जैवविविधता की संवेदनशीलता को मानते हुए वर्ष 2002 में संयुक्त राष्ट्रों की आम सभा ने समुद्र गिरियों और गभीर सागर के अन्य प्रमुख जीवों के नाश के प्रबंधन में वैज्ञानिक तौर पर एकीकरण और सुधार करने केलिए संघ राष्ट्र कन्वेशन के समुद्री मियम के अंतर्गत तुरंत प्रासंगिक कदम उठाए जाने का आह्वान किया गया था। इसके बाद फरवरी, 2004 महीने में 69 देशों के 1,136 वैज्ञानिकों ने एक प्रस्ताव निकाला कि महाद्विपीय समतल, ढालों, समुद्र गिरियों और मध्य महासागरीय रिड़जों में रहने वाले प्रवालों और स्पंज की विभिन्न जातियों पर मानवीय गतिविधियों, विशेषतः नितलस्थ आनायन से अधिकाधिक हानि पहूँच जाती है। प्रस्ताव में यह भी ज़ोर दिया गया कि सरकारों और संघ राष्ट्रों द्वारा गभीर सागर के नितलस्थ आनायन पर तुरंत प्रभाव से अधिस्थगन किया जाना है। फरवरी, 2004 में कनवेन्शन ओन बयोलजिकल डाइवेर्सिटी ने संघ राष्ट्रों की आम सभा में, गभीर सागर की आवास व्यवस्था खराब करने लायक किसी भी प्रयास नहीं उठाने का आह्वान भी किया है, राष्ट्रीय अधिकार क्षेत्र के बाहर के गभीर सागर क्षेत्रों, जहाँ समुद्र गिरियाँ, उष्णजल स्राव, शीत जल प्रवाल और अन्य संवेदनशील जीव अधिक मात्रा में उपलब्ध है, में हानिकारक मत्स्यन करने के विरुद्ध वैज्ञानिक स्तर पर अंतर्राष्ट्रीय नियमों के अंदर आवश्यक कदम और पूर्वानुमान उठाए जाने के लिए निवेदन किया गया है। कनवेन्शन ओन बयोलजिकल डाइवेर्सिटी, COP7-2004 ने निर्णय VII/5:30 में सहमति प्रकट की कि राष्ट्रीय अधिकार क्षेत्रों के बाहर के

गभीर सागर की जैव विविधता के परिरक्षण में प्रगति लाने और टिकाऊपन कायम रखने के लिए अंतर्राष्ट्रीय सहयोग और शीघ्र कार्रवाई की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

मात्स्यिकी के इतिहास के सबकों से यह व्यक्त हो गया है कि मात्स्यिकी टिकाऊपन पर और भी ध्यान नहीं दिया गया है तो यह नाश होने की संभावना है। इसका मतलब मत्स्यन बंद करना नहीं है बल्कि संवेदनशील प्रवालों और अन्य जीवों का नाश करनेवाले आनायकों का प्रयोग नियंत्रित रखना है। आनायकों के बजाय कांटा डोर या फँदा द्वारा मछली पकडी जा सकती है। नितलस्थ आनायन से वहाँ की आवास व्यवस्था पूरी तरह बदली जाती है और मछली जीव संख्या में भारी घटती होती है। अतः इस आनायक के विनाश से आवास व्यवस्था और इसके जीवों को बचाना आवश्यक है। इस गहन प्रयास से मछुआरों और मछली ग्राहकों को अधिकाधिक मछली मिलती है, मछली जाति विविधता बढ़ती है और स्वास्थ्य पूर्ण समुद्री आवास व्यवस्था कायम होती भी है।

मुख्य शब्द/Keywords

समुद्र गिरि - seamount

ओरंज रफी - orange roughy
अलफोन्सिनो - alfonsino
लाल मछली - red fish
} deep sea seamount fishes

अंतर्राष्ट्रीय समुद्र तट अथोरिटी - International sea bed authority

अधिस्थगन - moratorium

नितलस्थ आनायन - bottom trawling

मछली जीवसंख्या - fish population

उष्णजल स्राव - hydrothermal vents

मछली पकड और पालन में *एल नीनो* का प्रभाव

वी. चन्द्रिका
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन, केरल

पसिफिक महासमुद्र में भूमध्यरेखा के पास के पानी मौसमी हवा से गरम हो जाने का प्रतिभास है *एल नीनो*। 7-14 वर्ष के अंतराल में यह होता रहता है। इस मौसमी परिवर्तन के दौरान पूर्वी पसिफिक में भारी वर्षा और बाढ़ होती है (दक्षिण अमेरिका और पेरु) जबकि पश्चिमी पसिफिक में अनावृष्टि। मौसमी परिवर्तन में कोई गारंटी नहीं की जाने पर भी *एल नीनो* के समय परिवर्तन होने की संभावना ज्यादा होती है।

हज़ारों वर्षों से 3-4 वर्षों के अंतराल में *एल नीनो* घटित होता है। एक *एल नीनो* की अवधि 12-18 महीने होती है। क्रिसमस के समय *एल नीनो* होने के नाते दक्षिण अमेरिका के मछुवारों ने इसे *एल नीनो* से अभिहित किया जोकि बालक क्रैस्ट का दूसरा नाम है।

एल नीनो का कारण अव्यक्त होने पर भी इसके साथ घटित होनेवाली कुछ प्रक्रियायें समझी गई है। एल नीनेतर स्थितियों में मौसमी हवा पश्चिम की ओर बहने से ऊपरी तल के गरम पानी एशिया की ओर बह जाता है। तब नीचे का ठंठा पानी जो बडा पौष्टिक है, में प्राथमिक उत्पादकता के कारण मछलियों का वर्द्धन होता है।

एल नीनो के दौरान मौसमी हवा निर्बल हो जाने से पानी का तापमान बढ-जाने के अलावा पानी का बहाव भी कम हो जाता है। इस स्थिति में प्राथमिक उत्पादकता का ह्रास और तद्वारा मछली संपदाओं की कमी दिखाई पडती है। इस से मछलियाँ पूर्ववर्ती स्थिति में पहुँच जाने को 2 वर्ष तक लग जाती है।

पत्रव्यवहार : डॉ. (श्रीमती) वी. चन्द्रिका, प्रधान वैज्ञानिक, केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, पी.बी. सं. 1603, एरणाकुलम - 682 018, केरल

एल नीनो और पश्चिमी कालिफोर्निया समुद्री जीवन

स्थानीय मछलियों का प्रवास, उनकी बढत में क्षति, उनके पुनरुत्पादन में वृद्धि और स्थानीय जीवों व संस्तरों के नाश से उष्णकटिबंधीय मछलियों का प्रवेश *एल नीनो* से होनेवाले प्रभाव हैं।

पर्यावरणीय दाब में होनेवाले परिवर्तन से इस समय एक भाग में वर्षा और दूसरे भाग में अनावृष्टि होती है। पसिफिक के उत्तरी दिशा में वर्ष 1987 और 1992 में हुए *एल नीनो* के दौरान सूखा हुआ था तो दक्षिण भाग में भारी वर्षा भी।

गरम पानी के अनुसार उष्णकटिबंधीय मछलियाँ उत्तर की ओर प्रयाण करते हुए वृद्धि कर सकती है। इस दौरान बढती प्राथमिक उत्पादकता से होनेवाला उत्स्रवण तटीय जीवजातों को हानिकारक भी है। पर्यावरण में होनेवाला यह दो तरफा व्यतियान यहाँ के स्थानीय पक्षियों और मछलियों की बढत और उत्पादन में प्रभाव डालता है।

तटीय वनस्पतिजात एक तरफ् तूफान से विचलित होता है तो दूसरी ओर गरम और कम पौष्टिक पानी से उन्हें कष्ट झेलना पडता है।

वर्षा के दौरान पानी में होनेवाला कम लवणीयता और आविलता समुद्री जीवजातों को नुकसान पहूँचाने पर भी स्थिति

गरम पानी व उत्स्रवण की तरफ कठिन नहीं है। फिर भी वर्षा के साथ मलिन जल का बहाव बढ जाने से पानी दूषित हो सकता है। प्रदूषण मॉनिटरन भी इस समय मुश्कल हो सकता है।

एल नीनो के दौरान पर्यावरण में होनेवाले परिवर्तन का संबंध कभी कभी प्रदूषण से जोडे हुए देखा है। 'एल नीनो' के दौरान रॉक मछलियों की पकड में कमी दिखाई पडती है। इसका कारण प्रदूषण से बढकर प्राकृतिक आपदा हो सकता है।

जब *एल नीनो* का गरम पानी न बह जायेगा तब नीचे का सरद पौष्टिक पानी का ऊपर न उठ सकने से प्लवक जीवों का आहार काटा जायेगा जिस से समुद्री जीवों की बढत भी मंद हो जाता है। मछलियों की कम पकड इस समय की विशेषता है।

विश्व में पर्यावरीय परिवर्तन से बाढ और तूफान एल नीनो से जनित होता है।

_एल नीनो_ से हुई घटनाओं का विवरण

1982-83 - *एल नीनो* से सूखा और तूफान हुए थे इस में 1500 लोगों की मृत्यु हुई 8 बिल्यन $ का आर्थिक नष्ट भी। विश्व के मौसमी स्वरूप में *एल नीनो* के कारण परिवर्तन हुआ।

1991-83 - आगोल तौर पर चिंगट खेती पर इसका असर पडा। दक्षिण पूर्वी अफ्रिका में सूखा हुआ। दक्षिण ब्रज़ील, सेन्ट्रल अराजन्टिना, कालिफोर्निया, टेक्सास इक्वडोर और पेरु में भारी वर्षा। वर्ष 1993 में चीन के समुद्र तटों में भारी वर्षा।

1997-98 भयंकर *एल नीनो* ने पेरु, कोलम्बिया और इक्वडोर की जलवायु स्थिति में बडा परिवर्तन लाया जो कि एप्रैल 1997 से मई 1998 तक चलता रहा। एल नीनो के दौरान पसिफिक तट में झींगा पालन खेतों की चिंगट मात्स्यिकी में वर्द्धन होता है।

समुद्री चिंगटों के वर्द्धित पुनरुत्पादन से पश्च डिंभकों का वर्धन होता है।

यद्यपि *एल नीनो* के दौरान उत्पादन बढ जाता तथापि प्रकृति क्षोभ से होनेवाले नाशों से संपदाओं का नाश भी होता है।

किसानों की रिपोर्ट

एल सालवडोल में 1991-93 में हुए *एल नीनो* के बाद कठिन सूखा हुआ। संपदाओं की बढत में कमी दिखाई पडी। तायलांड में चिंगटों का अच्छा निर्यात हुआ। इक्वडोर में हुई भारी वर्षा से मछलियों का नाश हुआ साथ ही साथ समुद्री शैवाल फुल्लन से चिंगटों में चोक्लो नामक दुःस्वाद जनित हुआ। मेक्सिको के बारिश और गरमी में 400% बढत हुआ। पश्च डिंभकों का नाश हुआ। प्रवासी पक्षियों में नए नए दिखाए पडे।

_पी. वन्नामई_ की बढती दर में प्रभाव

वर्ष 1997 में करीबियन तट में हुए *एल नीनो* के दौरान पानी का तापमान 3^0C से 5^0C में बढ गया जब *पी. वन्नामि* की बढत दर भी 20% से 30% दिखाई। पसिफिक में पानी के तापमान और मछलियों की बढत में कोई अंतर नहीं दिखाया पडा।

हैचरी और खेतों पर प्रभाव

पेरु के 3000 हेक्टयर चिंगट तालाब का 1500 हेक्टर नष्ट हुआ। पानी दूषित हो जाने और प्राकृतिक आपदा से उत्पादन कम हो गया। साथ ही साथ रोग भी फूट पडा।

एल नीनो का मापन

अतिशक्तिशाली घटनाएं : पानी के ऊपरी तापमान में 7^0C तक की बढती हुई। पेरु में कठिन वर्षा और बाढ हुई।

शक्तिशाली घटनाएं : पानी के ऊपरी तापमान में 3-5^0C का वर्द्धन जो कि कई महीनों तक जारी रखा और बडी वर्षा भी हुई।

सामान्य घटनाएं : तटीय तापमान में 2-3^0C की बढत और वर्षा और बाढ में वर्धन।

एल नीनो और समुद्रांदर ज्वालामुखी

पसिफिक समुद्र में समुद्रांदर ज्वालामुखियों के प्रवर्तन से पानी गरम हो जाता है। एस्टर द्वीप के उत्तर पश्चिमी भाग में करीब 1133 समुद्री पर्वत और ज्वालामुखी पहचानी गई है। ज्वालामुखियों से आनेवाले ताप से यहाँ के तापमान और मौसम बदल जाता है। वैज्ञानिकों ने समुद्रांदर ज्वालामुखी और *एल नीनो* के सहसंबंध पर रिपोर्ट की है।

एल नीनो सथर्न ओसिलेशन इंडेक्स (ई एन एस ओ)

पश्चिम पसिफिक में उत्तरी आस्ट्रेलिया के ऊपर होनेवाले दाबीय आंतरिक प्रवर्तन को ई एन एस ओ कहा जाता है।

ला नीना

ला नीना और इसका सहोदरा *एल नीनो* भूमध्य रेखा के पास के पानी का गरम से ठंठा और ठंठा से गरम होकर बहवाने का पसिफिक पेन्डुलम का विरोधी प्रतिभास है। इसके ज़रिए भौगोलीय मौसम पाटर्न में परिवर्तन होता है। एल नीनो गरम घटना है तो ला नीना सर्द अनुभव। इन दोनों शक्तिशाली प्रतिभासों से सौरमंडल के कम से कम आधा भाग के मौसमी पाटर्न में परिवर्तन होता है।

सागरों की निगरानी

समुद्र में तूफान, सूनामी, एल नीनो जैसे प्राकृतिक आपदायें घटित होती है, फिर भी इसकी निगरानी केलिए कोई प्रणाली नहीं है। भौगोलिक सागरीय मॉनिटरन के लिए अमेरिकी सरकार ने 3000 बाया (buoy) से बनाया एक नेटवर्क प्रणाली 'आर्गो' विकसित की है जिस से पूर्वानुमान साध्य होता है। प्रत्येक परिक्रमण चक्र में प्रत्येक बोया 2000 मी. गहराई में डूबकर 12 दिवस परिक्रमण करने के बाद ऊपर आ जायेगा। बोया में तापमान, लवणीयता, प्रवाह की दिशा आदि साटलैट के ज़रिए मॉनटरन करने की व्यवस्था की गई है।

मुख्य शब्द/Keywords.
एल नीनो - El Nino
ला नीनो - La Nino
ENSO - El Nino Southern Oscillation Index

अंतर्स्थलीय मात्स्यिकी में पर्यावरणीय व्यतियान

प्रीता पणिक्कर और फिरोज़ खान
केन्द्रीय अंतर्स्थलीय मात्स्यकी अनुसंधान संस्थान, बैंगलूर, कर्नाटक

मौसम में बदलाव से भूमण्डल में मछली संपदाओं को प्रत्यक्ष आपत्ति होती है। जल-तल और जल प्रवाह के व्यतियान से नदियों और जलाशयों की उत्पादनक्षमता में बाधा पहुँच सकती है। मौसम की बदलाव से निपटने के लिए कृषि क्षेत्र में ज़्यादा पानी का उपयोग होने पर नदियों से पानी लेना पडता है जिसके फलस्वरूप अंतर्स्थलीय मात्स्यिकी क्षेत्र पर बुरा असर पड़ सकता है। एशिया भूखंड में अंतरस्थलीय मछली की पकड 64% है। इसमें ज्यादातर मछली छोटे पैमाने के मछुवारों द्वारा पकडे जाते है।

अंतर्स्थलीय मात्स्यिकी में आगोल तापन का प्रभाव

पानी का बढ़ता हुआ तापमान मछलियों पर बहुत प्रभाव डालता है। मछली-मछली में तापमान सहने की सीमा विभिन्न होती है। पेड़-पौधों और चिडियों के समान जहाँ मछली बडी मात्रा में पाई जाती है वहाँ पानी ज़्यादा गरम या ज़्यादा ठंड़ा नहीं है। वैज्ञानिकों को यह निश्चित नहीं है कि मौसम बदलाव के पश्चात मछलियों की उपलब्धि बढेगी या घटेगी। चूँकि गरम तापमान से मछलियों में जैव सक्रियता बढ़ने लगती है इसलिये गरम तापमान में जीने वाले मछलियों की बढ़त जितनी बढ़ पायेगी उतनी ठंडे पानी में जीने वाले मछलियों की कमी भी। गरम पानी मछलियों के अधिक उत्पादन से ठंठेपानी मछलियों की कम उत्पादें समीकृत हो सकती है। कुल जमा मछलियों से जितनी पकड़ सकते है, इसके अलावा विचाराधीन प्रश्न यह है कि मौसम के बदलाव के पश्चात ज्यादातर अंतर्स्थलीय मात्स्यिकी में प्रतिकूल प्रभाव पडने वाला है। ज्यादा तापमान के कारण विलीन अक्सिजन कम स्तर तक पहुँच सकता है जिससे मछलियाँ मर सकती है। आगोल तापन से पानी का प्रदूषण बढ़ सकता है।

पत्रव्यवहार : डॉ. प्रीता पणिक्कर, वैज्ञानिक,
जलाशय विभाग, केंद्रीय अंतर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, हेस्रा घाटा पोस्ट, बाँगलूर 560 089, कर्नाटक

पानी संपदा पर मौसम बदलाव का प्रभाव

मौसम बदलाव के कारण बाष्पीकरण और वर्षण की बढती हो सकती है। इसके वज़ह से जिस प्रदेश में ज़्यादा बाष्पीकरण और कम वर्षण होता है वहाँ की मिट्टी सूख सकती है और जलाशयों में पानी का तल कम हो सकता है। इसके अलावा नदियों में पानी कम हो सकता है।

कई प्रदेशों में वर्षा ज्यादा हो सकती है और बाढ़ की वजह से अवसाद पोषक वस्तुएं और प्रदूषण के कारण नदियों, जलाशयों और नदीमुखों की जैवविविधता पर प्रतिकूल प्रभाव या अदल-बदल हो सकती है।

इन दिनों वातावरण में दबाव के कारण अंतर्रस्थलीय जलाशयों के प्रवाह में बदलाव जीवजातों का आवास नाश, पानी की लवणीयता में उतार चढाव, सुपोषण, विषैले काइयों का फुल्लन, आक्रमणकारी जीवों का पानी में प्रवेश इत्यादि देखने को मिला। यह मीठा पानी की जैवविविधता की असुरक्षित स्थिति तक पहुँचा सकता है। मौसम के बदलाव के पश्चात स्थिति और दयनीय हो सकती है।

विकासमान देशों की मात्स्यकी पर मौसम का बदलाव के प्रभाव संभावित खतरा बन सकती है। इस से बचने के लिए पर्यावरण तंत्र अभिगम की ज़रूरत है।

मौसम के बदलाव के प्रभाव को कम करने के लिए निम्नलिखित कार्यों पर ध्यान देना है।

मौसम के बदलाव का प्रभाव को पूर्वानुमान करने की क्षमता पुष्ट करना।

द्रोणी-जल विज्ञान मोडलिंग में मौसम का बदलाव का प्रभाव और जैवविविधता पर असर इत्यादि एकत्रित करना।

दूरवर्ती संवेदन और GIS के ज़रिये असुरक्षित अंतर्स्थलीय वातावरण का आधार आंकडा बनाना

अंतर्स्थलीय जैवविविधता के संरक्षण के लिये सुरक्षित वातावरण पहचानना और चुनना।

वैज्ञानिकों का विचार यह है कि आगोल तापन की वज़ह से मात्स्यिकी क्षेत्र में सबसे बड़ा प्रभाव होने वाला है। मछलियों से मांस प्रोटीन का 1/5 भाग प्राप्त होता है। आगोल तापन के कारण कुछ मछलियों का विनाश और कुछ मछलियों की बढ़ौती हो सकती है। विभिन्न वातावरण में इसका प्रभाव अलग-अलग होता है। वैज्ञानिकों ने मौसम का बदलाव का मोड़ल बनाये हैं उस से ये सूचना मिलती है कि उत्पादनक्षमता और मछलियों के वितरण में प्रकट बदलाव होने वाला है।

मुख्य शब्द/Keywords.
अतर्स्थलीय मात्स्यिकी - inland fisheries
आगोल तापन - global warming
नदीमुख - estuaries
सुपोषण - eutrophication
विषैले काइयों का फुल्लन - algal blooms
पर्यावरणी तंत्र अभिगम - ecosystem approach
संसाधन - resource
दूरवर्ती संवेदन - remote sensing
GIS - Global Information System

गुजरात की समुद्री मात्स्यिकी के कुछ पर्यावरणीय संघात

के.वी.एस. नायर, पी.के. अशोकन और वी.आर. मधु*
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, वेरावल क्षेत्रीय केंद्र, गुजरात,
* सी आइ एफ टी का वेरावल अनुसंधान केंद्र

भूमिका

गुजरात भारत में सबसे लंबी तट रेखा होनेवाला राज्य है और नब्बे के वर्षों के अंत में पूरे समुद्री मछली उत्पादन में पहले या दूसरे स्थान पर आता था। कुल समुद्री मछली उत्पादन, जो वर्ष 1998 में 0.7 मिलियन टन था, वर्ष 2005 में 0.4 मिलियन टन तक घट गया। इस तेज़ घटती का कारण वर्द्धित मत्स्यन दबाव था। छोटी जालाक्षियों वाले यंत्रीकृत आनायकों से उपतटीय मात्स्यिकी संपदाओं की पकड के फलस्वरूप छोटी मछलियों का अतिमत्स्यन ज़्यादा होता है। मात्स्यिकी संपदाओं की घटती का और एक कारण अनियंत्रित रूप से पनपने वाला औद्योगीकरण विशेषकर तट पर स्थित रासायनिक और हाइड्रोकार्बन उद्योग और जहाज़ तोडने के उद्योग से होने वाला समुद्री प्रदूषण और पर्यावरणीय अवनति है। उद्योगों के उत्सर्ज्यों और प्रदूषकों की वजह से राज्य की समुद्री संपदाओं पर प्रतिकूल प्रभाव पडा है। इस लेख में तटीय समुद्री आवास व्यवस्था और मात्स्यिकी पर प्रभावित कुछ पर्यावरणीय विपत्तियों पर प्रकाश डाला गया है।

समुद्री मात्स्यिकी का स्तर

गुजरात राज्य में उपतटीय समुद्र (<50 मी की गहराई) का समुद्री मछली उत्पादन प्रग्रहण योग्य शक्यता (0.7 मिलियन ट/व) पर पहुँच गया है और आगे तटीय समुद्र से उत्पादन बढ़ाने की प्रत्याशा बहुत कम है। तटीय समुद्र का लगभग 80% उत्पादन करने वाले अनुचित प्रकार के विदोहन तरीके और आनायकों के अधिकतर प्रयोग से उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव होने लगा। कई मत्स्यन केंद्रों में मत्स्यन बेडाओं की बढ़ती हुई संख्या और स्पर्धा के कारण मत्स्यन पोतों की पकड दर घटती की ओर थी।

ओलीव राइडली समुद्री कच्छप, जो खतरे में पड गयी जाति है, की जीवसंख्या घटती का एक कारण आनायकों का ज़्यादातर प्रयोग है। भारत के पूर्वी तटों में नीडन के लिए आते वक्त इनके वयस्कों को जाल से अनियंत्रित रूप से पकडा जाता है (पान्डव आदि 1998)।

नितलस्थ आनायन

नितलस्थ आनायन से होने वाले दो प्रमुख प्रभाव है समुद्री संस्तर खराब होना और अवांछित मछली जातियों की ज़्यादातर पकड, जिन्हें उप पकड़ कहा जाता है। इन पकडों का अनुपात बहुत अधिक है और खाद्य एवं कृषि संगठन के केल्लर द्वारा किए गए वर्तमान अध्ययन (2004) यह दिखाता है कि प्रति वर्ष 7.3 मिलियन टन उप पकड मिलती रहती है। चिंगट और तलमज्जी पख मछलियों की आनायन मात्स्यिकी कुल आकलित अवांछित मछलियों का 50 प्रतिशत और कुल मात्स्यिकी का 22 प्रतिशत योगदान करती है। आनाय जाल सभी संभारों में से अत्यंत विनाशकारी है और इसमें मछलियों की चयनात्मकता कम होने की वजह से इन्हें द्वारा भारी मात्रा में उप पकडों का

पत्रव्यवहार : डॉ. के.वी.एस. नायर, प्रधान वैज्ञानिक और प्रभारी वैज्ञानिक, केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान का वेरावल क्षेत्रीय केंद्र, मत्स्य भवन, भिडिया, वेरावल, गुजरात - 362 269

अवतरण किया जाता है। समुद्र तल में होने वाले प्रभावों का मात्रीकरण करना मुशकिल की बात है और पकड में होने वाली घटती तल में होने वाले हलचलों के कारण होगी।

गुजरात के तटों में लकडी से निर्मित और नितलस्थ आनाय जाल युक्त मध्यम आकार के यंत्रीकृत आनायकों का परिचालन किया जाता है। जालों का कॉड एन्ड 2.5-3.0 मि मी एच डीपीडी धागा से 10-15 मि मी की जालाक्षि आकार का है। इन शक्त धागों से युक्त जालों के परिचालन से समुद्र के संस्तर और आवास में स्थायी परिवर्तन होता है। इस स्थान में जीव जातों का पुनः निवेशन के लिए बहुत समय लगेगा और इस मत्स्यन तरीके से होने वाला आवासीय खतरा मात्स्यिकी के टिकाऊपन पर पडता है।

निरंतर मत्स्यन से होनेवाले हलचल से समुद्री संस्तर के अधिक जीवों और जैवमात्रा की कई जातियों का नाश होता है। ये जीव समुद्री संस्तर की स्थलाकृतीय जटिलता बढ़ाकर किशोर मछलियों को पनाह देते रहते हैं। इस आवास के परिवर्तन से वहाँ रहने वाली मछलियों का समूचे रूप से नाश होता है और आवासीय संरचना गडबड होता भी है।

गुजरात के मत्स्यन उद्योग का मुख्य आधार आनायक हैं। यहाँ कुल 7163 आनायकों का परिचालन किया जाता है जिनसे कुल समुद्री अवतरण के दो से अधिक भागों का योगदान होता है। गुजरात में पकडी गई सारी मछलियों (लक्षित और आकस्मिक) को तट पर लाया जाता है और उपयुक्त किया जाता है। इसलिए बहुत कम मछलियों को छोड दिया जाना पडता है। अध्ययनों से व्यक्त होता है कि गुजरात तट में बहु दिवसीय और एक दिवसीय आनायन से क्रमशः 600 कि.ग्रा. और 150 कि.ग्रा. आकस्मिक पकड तट पर लायी जाती है।

उप पकड का अनुपात कम करने वाले कुछ प्रबंधन उपाय ये हैं।

- बडी जालाक्षियों युक्त जालों जैसे अधिक चयनात्मक मत्स्यन गिअरों को प्रयोग में लाना
- आनायन तरीकों को उप-वेलापवर्ती और मध्यजल आनायन के रूप में परिवर्तित करना
- चयनात्मकता बढ़ाने के लिए चतुष्कोणीय जालाक्षि, पृथक्कारी जाल, कच्छप निष्कासन उपाय और आनाय जाल की रूपकल्पना और संरचना में परिवर्तन लाना
- संबंधित संभार की चयनात्मकता के अनुसार न्यूनतम अवतरण करना
- अधिक चयनात्मक मत्स्यन करने वालों को आर्थिक प्रोत्साहन देना
- अवांछित मछलियों की पकड का वैज्ञानिक एवं तकनीकी तौर पर मॉनीटरन

जहाज़ तोडने से संबंधित विपत्तियाँ

दुनिया का सब से बडा जहाज़ तोडने का स्थान है अलांग जहाँ 40,000 लोग काम करते हैं। गुजरात मारिटाइम बोर्ड (GMB), अहम्मदाबाद के अनुसार यहाँ प्रति वर्ष 200 जहाज़ों को तोडा जाता है जिससे 2.6 मिलियन टन इस्पात को निकाला जाता है। यह देश के कुल इस्पात उत्पादन का 15 प्रतिशत है।

जहाज़ तोडने के उद्योग से तटीय मेखला और समुद्री पर्यावरण में बहुत विनाश होता है। जहाज़ तोडते वक्त आविषालू विसर्ज्य, तेल, पोलीक्लोरिनेटड बाइफेरिल्स (अत्यंत जहरीला रासायनिक) और भारी धातु जैसे कई खतरा युक्त प्रदूषक पानी और समुद्री संस्तर में जोडा जाता है। तोडने से पहले जहाज़ में बच गए तेल साफ करने के लिए उपयुक्त रेत भी समुद्र में फेंक देता है। इस वजह से तटीय समुद्र में उच्च सांद्रता के तेल और ग्रीस जमा होता है और समुद्र जीवों के नाश का कारण बनता है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा किया गया अध्ययन यह व्यक्त करता है कि इस उद्योग से लगभग 45 टन ठोस विसर्ज्य तटीय समुद्र में जमा होता है।

इस से होने वाले मुख्य प्रदूषक आस्बस्टोस, पेइन्ट, इस्ताप के टुकडे, गास्केट, ग्लास वूल, तेल, ग्रीस (पेट्रोलियम हाइड्रोकार्बन्स) और सिमेन्ट इस स्थान के समुद्री पर्यावरण खराब करते रहते हैं (तिवारी, 1995) ग्रीनपीस के अनुसार, नमूनों का विश्लेषण करने पर देखा गया कि कार्य स्थान का वातावरण जहाज़ हल्ल के प्रतिदूषण पेइन्टों से होने वाले ओर्गनोटिन यौगिकों से तीव्र रूप से प्रदूषित हो गया है। इन विनाशकारी वस्तुओं से समुद्री संस्तर भी प्रदूषित होता है। इस प्रकार समुद्री संस्तर में पडने वाले भारी धातु खाद्य श्रृंखला में प्रवेश करके मछलियों द्वारा मनुष्य में प्रवेश करते हैं। तटीय समुद्र को प्रदूषित करने के साथ साथ हज़ारों लोग बसने के कारण वहाँ की जैवरासायनिक ऑक्सिजन माँग बढ़ जाती है।

औद्योगिक विसर्ज्य

पश्चिम भारत में बडी भीड़ होनेवाले अहम्मदाबाद शहर से लेकर वापी तक 400 कि.मी. की दूरी में कई औद्योगिक क्षेत्र फैले गए हैं जिसे 'गोल्डन कोरिडोर' कहा जाता है। यहाँ रासायनिक, डाइ, पेइन्ट, उर्वरक, प्लास्टिक, पल्प और कागज़ के निर्माण के सैकडों छोटी और बडी फैक्टरियाँ स्थित हैं और इन स्थानों से विसर्ज्यों को उपचार करने के बिना समुद्र में छोडा जाता है। पेट्रोलियम उत्पादों के परिवहन और भंडार से होने वाला तटीय और समुद्री प्रदूषण चिंता का और एक विषय है। तेल के जमाव से समुद्र जीव, प्रवाल और मैंग्रोव का नाश होता है। कभी कभी गुजरात से पाए जाने वाले शीर्षपादों में ट्रेस एलमेन्ट कैड्मियम की मात्रा 1ppm के अनुमत्य स्तर से ज्यादा दिखाया पडता है। इस कारण से इस संपदा को यूरोपियन यूनियन को निर्यात करने से रोध बन गया है।

मैंग्रोवों और प्रवाल भित्तियों का विनाश

हाल के समय तक कच्छ क्षेत्र का तटीय आवास तंत्र और पर्यावरण किसी तरह के हस्तक्षेपों से मुक्त स्वच्छ क्षेत्र था। पिछले कुछ वर्षों से लेकर यहाँ विभिन्न प्रकार के उद्योग पनपने लगे। मैंग्रोव और प्रवाल क्षेत्र आवासीय तौर पर संवेदन शील है और इनका संरक्षण किया जाना भी आवश्यक है। मैंग्रोव मिट्टी का अपरदन रोकने में प्रधान भूमिका निभाते हैं और मछलियों, कवच प्राणियों और अन्य समुद्री जीवों को प्रजनन और पालन स्थान प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त यह पक्षियों और अन्य वन्य जीवों का आवास स्थान प्रदान करता है। सबसे बडा और घना मैंग्रोव वन कच्छ तटीय मेखला में स्थित है। इस क्षेत्र से प्राप्त मौसमिक झींगा मात्स्यिकी जिसे सूरजबारी मात्स्यिकी कहा जाता है, में *मेटापेनिअस कच्छेन्सिस* ज़्यादातर मिलता है।

मानवीय हस्तक्षेपों के फलस्वरूप इस क्षेत्र के मैंग्रोव और प्रवाल आवास तंत्र गंभीर भीषण के अंदर हैं। खम्भाट खाड़ी से मैंग्रोव गायब हो चुका है। कई वर्षों से लेकर मैंग्रोवों की जैवविविधता भी समाप्त हो चुकी है।

कच्छ की खाड़ी में लगभग 460 वर्ग कि.मी. के क्षेत्र में प्रवाल फैला हुआ है। लेकिन अब यह क्षेत्र खनन, तलमार्जन, मत्स्यन, प्रवाल संग्रहण और मनोरंजन जैसे मानवीय गतिविधियों के दबाव के अधीन पड गया है। कीचड जमा होकर यहाँ के प्रवालों की व्यापक अवनति हुई है। इसका कारण मैंग्रोवों को काटना है। कच्छ की खाड़ी में किए गए अध्ययन से यह व्यक्त हो जाता है कि रोग ग्रस्तता, परभक्षण और दबाव प्रवाल मृत्युता के मुख्य घटक हैं (रवीन्द्रन आदि 1999)

मुख्य शब्द/Keywords.
आनायन - trawling
आनायक - trawler
स्थलाकृतीय जटिलता - topographic complexity
उप-वेलापवर्ती - sub-pelagic
मध्यजल आनायन - mid-water trawling
चयनात्मकता - selectivity
पृथक्कारी जाल - seperator grid
कच्छप निष्कासन उपाय - turtle exclusion device (TED)
गुजरात मारिटाइम बोर्ड - GMB
आविषालू विसर्ज्य - toxic waste
केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड - Central Pollution Control Board
ओर्गनोटिन यौगिक - organotin compound
प्रतिदूषण - antifouling
BOD - Bio chemical Oxygen Demand
शीर्षपाद - cephalopod
अनुमत्य स्तर - permissible level
परभक्षण - predation
सूरजबारी मात्स्यिकी - a unique seasonal prawn fishery of Kutch coastal line in Gujarath

प्रवाल झाडियों की अवनति बनाम मात्स्यिकी

संध्या सुकुमारन
सी एम एफ आर आइ का मंडपम क्षेत्रीय केंद्र, मंडपम कैंप, तमिलनाडू

प्रवाल की झाडियाँ पौधे और जीवों की जटिल अंतर निर्भरता की विलक्षणता से युक्त सुंदर आवास तंत्र हैं। ये लगभग 25% समुद्री जीव जातियों को आवास स्थान प्रदान करते हैं। इन झाडियों में बसनेवाले समुद्री मछलियों की लगभग 4000 जातियों और झाडी बनानेवाले प्रवालों की 800 जातियों की सूचना अब तक प्राप्त हुई है। प्रवाल की झाडियाँ विश्व व्यापक तौर पर कम से कम 10 मिलियन लोगों को खाद्य और आजीविका प्रदान करती हैं, प्रमुख उद्योगों (मात्स्यिकी एवं पर्यटन) को सहारा देती हैं, तट रेखा के निर्माण में प्रमुख स्थान निभाती हैं और उनकी जाति बहुलता और आनुवंशिक विविधता उष्णकटिबंधीय वर्षावन से समानता रखनेवाली है। इसके अतिरिक्त ये मछलियों और अकशेरुकियों को पनाह, प्रजनन और पालन स्थान प्रदान करके स्थल से खुले सागर तक पोषण का परिसंचरण करते हैं। प्रवाल की झाडियाँ मानव की खपत के लिए पकडी जाने वाली मछलियों के 10% को खाद्य और प्रजनन धरातल प्रदान करती हैं। भूमि के महासागर उपरितल क्षेत्र (361 मी./कि.मी.^{2}) का केवल 0.11% (4,14,000 वर्ग कि.मी.) क्षेत्र में झाडियाँ होने पर भी पूरे विश्व की मछलियों का एक तिहाई भाग (कुल समुद्री मछली जातियों का 25%) प्रवाल झाडियों में रहती हैं।

प्रवाल झाडी की अवनति

अब दुनिया का प्रवाल झाडी आवास तंत्र निर्णायक अवस्था में है। अतिमत्स्यन, रोग, बडे पैमाने की बाधाएं, भौगोलिक मौसमिक परिवर्तन (उदाः ओज़ोन अवनति, भौम तापमान) जैसे स्थानीय, क्षेत्रीय और भौगोलिक तौर के दबावों और बढ़ती हुई आबादी की वजह से प्रवालों का ह्रास होने लगा। इन में अधिकांश परिवर्तन विश्व व्यापक तौर पर मानवीय कार्यों से प्रेरित परिवर्तनों से संबंधित हैं। प्रवाल भित्तियों के स्वास्थ्य की अवनति और भित्तियों की जातियों में हुए नाश या परिवर्तन पर किया गया वर्तमान आकलन पूरे विश्व में विचार का विषय बन चुका है। यह आकलन किया जाता है कि अगर उचित कदम नहीं उठाया तो भौतिक, रासायनिक और जीव विज्ञानीय दबावों की वजह से आगामी 50 वर्षों के दौरान 40% से 60% प्रवाल झाडियों का नाश होगा। लगभग 10% प्रवाल झाडियों का पूर्णतः नाश हो चुका है (मृत या पुनरुज्जीवन नहीं करने लायक नष्ट) और 30% अत्यंत संकट स्थिति में हैं। अगर वर्तमान हालत जारी रहें तो एक या दो दशकों के अंदर इस में 30% झाडियों का संपूर्ण नाश होगा और अगले 30% खराब भी हो जाएगा। भौगोलिक रूप से समूची प्रवाल झाडियाँ अति मत्स्यन, सयनाइड मत्स्यन, आसिड मत्स्यन, डायनामिट मत्स्यन, सिमेन्ट निर्माण, मैंग्रोव विनाश (जो अवसादों से प्रवाल भित्तियों का संरक्षण करते हैं), अवसादों का जमाव (औद्योगिक प्रदूषण, मलजल, मिट्टी अपरदन, खनन, वन नशीकरण, ग्रामीण विकास, प्रवाल झाडी खनन, तलमार्जन) कीटनाशक और मानव गतिविधियों से होनेवाला पोषण (उर्वरक युक्त मलजल) से भीषणी की अवस्था में हैं। प्रवाल भित्तियाँ उपर्युक्त बाधाओं के प्रति अतिसंवेदनशील हैं क्योंकि वे सूर्यप्रकाश पर आश्रित होकर रहनेवाले जीव हैं। पोषकों की वजह से समुद्र के पानी का सुपोषण होता है जिससे शैवालों की बढ़ती ज्यादा होकर प्रवालों तक सूर्यप्रकाश का प्रवेश कम होता है। प्रवाल झाडी क्षेत्रों से

पत्रव्यवहार : डॉ. (श्रीमती) संध्या सुकुमारन, वैज्ञानिक, केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान का मंडपम क्षेत्रीय केंद्र, मंडपम कैंप, मराइन फिशरीस पी.ओ., मंडपम कैंप - 623520, तमिल नाडू

शाकाहारी मछलियों को अधिक मात्रा में पकडने पर प्रवालों के ऊपर शैवालों की ज्यादा बढ़ती होकर प्रवालों की मृत्युता होती है।

बढ़ता हुआ अवगाह और चिंतन के होते हुए भी तटीय और अन्य जलीय आवास व्यवस्थाएं प्रदूषण और अविवेकपूर्ण उपयोगिता से अवनति पर है। इस से प्रवाल भित्तियों पर प्रतिकूल संघात होता है क्योंकि उथले जल के मछली आवास जैसे मैंग्रोव, समुद्री घास संस्तर, प्रवाल भित्तियाँ, नदीमुख, उपसागर, नदियाँ, झील और दलदली क्षेत्र जीव विज्ञानीय तौर पर अत्यंत उत्पादनशील और पर्यावरणीय तौर पर विभिन्न जलीय वातावरण प्रदान करने वाले हैं।

प्रवाल झाडियों के नाश से मात्स्यिकी पर संघात

विश्व की मात्स्यिकी मुख्यतः दो कारणों से अवनति की अवस्था पर है - एक अतिमत्स्यन और दूसरा समुद्री पर्यावरण की अवनति। अतिमत्स्यन से मछली पकड में होने वाली 10-15% घटती की तुलना में पर्यावरणीय अवनति से पकड में 3-5% की घटती होती है। पर्यावरणीय नष्ट की संभाव्यता अतिमत्स्यन से होनेवाले नष्ट से ज्यादा है। प्रवाल भित्तियों जैसे प्रमुख आवास स्थानों की अवनति पर्यावरणीय अवनति का मुख्य कारण माना जाता है। पख मछलियों और कवच मछलियों जिन पर कई राष्ट्रों की अर्थव्यवस्था आश्रित होती है, के लिए प्रवाल भित्तियाँ बेहत्तर उत्पादन क्षेत्र हैं। कुछ छोटे पसफिक द्वीपों की आबादी के प्रोटीन खपत का 90% रीफ जीव जातियों से होता है। प्रवाल झाडी मात्स्यिकी की शक्यता प्रतिवर्ष लगभग 9 मिलियन कि. ग्रा. होती है जहाँ से पूरे विश्व की मात्स्यिकी की 12% पकड की जाती है। अन्य अध्ययन यह सूचित करते है कि विकासशील दुनिया में समूची मछली पकड का 25% प्रवाल भित्ति मात्स्यिकी से मिलता है और खाद्य के रूप में मानव खपत के लिए भौगोलिक रूप से पकडी गयी मछलियों का 10% इस क्षेत्र से प्राप्त हुआ है। प्रवाल भित्तियों की मात्स्यिकी में खाद्य मछली, मनोरंजनकारी, अलंकारी और वाणिज्यिक मछलियाँ मौजूद हैं।

प्रवाल झाडियों की मछली संपदाएं कम बढ़ती दर, लंबा जीवनकाल और सीमित स्थानों में रहने की आदत के कारण अति विदोहन के पात्र हुए हैं। कई प्रवाल भित्तियों का गंभीर रूप से अति मत्स्यन हो चुका है, जिसके फलस्वरूप जाति विविधता में उल्लेखनीय घटती और इन स्थानों में बडी मात्रा में पायी जानेवाली मछलियों के प्रभेदों का विनाश होता है। इसके अतिरिक्त अति मत्स्यन से विनाशकारी शैवालों की अधिक फुल्लिकाएं होती है, जो प्रवाल भित्तियों के लिए हानिकारक है।

प्रवाल झाडियों पर मत्स्यन का प्रभाव

विनाशकारी मत्स्यन प्रवाल झाडियों की अवनति का और एक मुख्य कारण है। आर्थिक प्रतिरूपण पर आधारित अध्ययन यह सुझाव देते हैं कि प्रवाल झाडी क्षेत्रों में अनुकूल संपदा उपयोग कायम रखने केलिए मत्स्यन प्रयास 60% तक कम करना आवश्यक है। उष्टकटिबंधीय उपतटों में मछलियों और चिंगटों के लिए आनायन करने पर प्रवाल भित्तियों का व्यापक नाश होता है। विश्व के कई क्षेत्रों में यह देखा गया कि मत्स्यन से प्रमुख परभक्षी मछली जातियों की प्रचुरता में भारी घटती होती है, जिस से आवास व्यवस्था में परिवर्तन होता है। प्रारंभिक मत्स्यन प्रयास में ग्रूपर और सुरा जैसे प्रमुख परभक्षियों का नाश होता है। इसी प्रकार विनाशकारी मत्स्यन जैसे जहर डालकर मत्स्यन करने से प्रवाल जातियों का नाश होता है। इस तरीके में मुख्यतः सायनाइड जैसे कडा जहर उपयुक्त किया जाता है जो मानव के लिए भी हानिकारक है। सोडियम सायनाइड के प्रति प्रवालों की सह्यता बहुत कम है और जहर डालकर मत्स्यन रिपोर्ट की है। इसी प्रकार विस्फोटनकारी मत्स्यन भी प्रवालों और प्रवालों में रहने वाली वेलापवर्ती मछलियों के लिए हानिकारक है। छोटे मत्स्यन याने लंगर करते वक्त प्रवालों का व्यापक नाश होता है। अनेक विकासशील देशों में प्रवालों पर

जकड़ने लायक लंगरों का प्रयोग किया जाता है। इस से बडे पैमाने में प्रवालों का विनाश होता है।

प्रबंधन उपाय

प्रवाल झाडी आवास तंत्र और मात्स्यिकी के टिकाऊपन कायम रखने के लिए उचित प्रकार की प्रबंधन रणनीतियाँ रूपाइत करने की ज़रूरत है। प्रबंधन उपायों पर विचार करते वक्त निम्नलिखित मुद्दों पर ध्यान रखना चाहिए।

1. मात्स्यिकी प्रबंधन में भूमि पर आधारित प्रदूषण कम करने के लिए जलक्षेत्रों के बोधशील प्रबंधन पर ध्यान दिया जाए।
2. मात्स्यिकी के संरक्षित स्थानों से मछली पकड़ने की अनुमति नहीं दी जाएं।
3. संरक्षण स्थानों के रूपायन और प्रबंधन संस्थानों को मिलाकर और स्थानीय लोगों की जानकारी के आधार पर किया जाएं।
4. समुद्री संवर्धन और कृत्रिम आवासों के निर्माण से प्राकृतिक स्टॉक पर होने वाला दबाव कम किया जाएं।
5. आजीविका के बदल उपायों द्वारा मत्स्यन दबाव किया जाएं।
6. आनायन से होनेवाला संघात कम करने के लिए पूरे उपतटीय क्षेत्रों में बसनेवाली प्रवाल जातियों का प्रमात्रीकरण और चार्टिंग किया जाएं।

उपर्युक्त प्रबंधन उपायों के कार्यान्वयन और तटीय लोगों में अवगाह जगाने से प्रवाल झाडी मात्स्यिकी संपदाओं के टिकाऊपन सफल हो जाएगा।

मुख्य शब्द/Keywords
प्रवाल की झाड़ी - coral reef
उष्णकटिबंधीय उपतट - t-ropical shelves

समुद्री जीवियों पर तापमान का प्रभाव

एस. लक्ष्मी पिल्लै
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान के चेन्नै अनुसंधान केन्द्र, चेन्नै, तमिलनाडु

जल का तापमान सबसे आसान रूप से प्रेषण कर पाने वाला पर्यावरण कारक है। समुद्री जीव जन्तुओं में तापमान का अत्यधिक प्रभाव है। तापमान को मापने केलिए, अधिकतम, न्यूनतम तथा विपरीत थर्मोमीटर का उपयोग किया जाता है। जल के रासायनिक, भौतिक एवं जैवकी प्रभावों का नियंत्रण तापमान से होता है। बहुत सारे गवेषकों ने जल जीवियों पर तापमान के प्रभाव को पढ़ने की कोशिश की है। जल जीवियों में तापमान महसूस करने की प्रवणता अत्यधिक विकसित है। अनेक अन्वेषकों ने जल जीवियों की चलन एवं फैलाव पर तापमान के प्रभाव की चर्चा की है। जल जीवियाँ अलग या विविध तापमान सह सकते है एवं उनके अलग-अलग अधिमान है जिसके कारण किशोर और प्रौढ जीवियों के अलग अलग क्षेत्रीय फैलाव देखने को मिलता है।

तापमान का समुद्री जल जीवियों पर सबसे अधिक प्रभाव अण्डजनन के वक्त दिखाई देता है। इससे तुरन्त पहले भी तापमान का प्रभाव है, क्योंकि इस समय ही लैंगिक उत्पाद परिपक्व होता है। अधिकतर समुद्री अपृष्ठवंशी प्राणियों का अण्डजनन तापमान के संकीर्ण सीमाओं में होता है। तापमान में दीर्घतर बदलाव, अण्डजनन की भूमि में आवधिक स्थानान्तरण भी ला सकता है। तापमान, डिम्भकों के उद्‌भव के लिए अत्यंत आवश्यक है एवं डिम्भक के जीवन की लम्बाई, प्रत्यक्षतः तापमान पर निर्भर है। अनेक मार्गों तहत, तापमान डिम्भक पर प्रभाव डालता है। इसमें से सबसे अधिक प्रभाव शायद खाद्य की उपयुक्तता पर है। यह बात बहुत ही प्रत्यक्ष है कि खाद्य, जो कि डिम्भक के लिए अनुयोज्य हो, उसे ठीक वक्त पर मिलना चाहिए, जो कि पादप की संवर्धन से जुडा है। पादप संवर्धन निर्भर रहता है, तापमान के मौसमी बदलाव पर एवं प्रकाश पर। (प्रकाश, समुद्रीय जल के तापमान से साधारणतः सहसम्बन्धित है।) खाने की गति, उपापचयन और वर्धन, खाद्य की उपयुक्तता पर ही नहीं बल्कि, जल के तापमान पर भी सीधे रूप से निर्भर करता है। इष्टतम तापमान के नीचे, खाने की सक्रियता अक्सर कम होती है। परोक्ष रूप से, तापमान खाद्य उदाहरण के लिए पादप की बहुतायत को प्रभावित करता है। तापमान का सामान्य रूप से अधिक हो जाने पर, प्राणियों में खाने की प्रवणता कम हो जाता है। कम तापमान में, उपापचयन की गति कम हो जाती है, तथा निचला सक्रियता के कारण, समुद्रीय जीवियाँ, मुख्यतः मछलियाँ ज्यादा बड़े हो जाते है तथा वे अधिक काल तक जीवित रहते है।

अनेक जल जीवियों में, गर्मी के समय ध्रुव की ओर तथा शीतकाल में भूमध्य की ओर मौसमी प्रवास देखने को मिलता है। यह प्रवास तापमान के सीधे प्रभाव के कारण हो सकता है, या फिर खाद्य की बहुतायत पर तापमान के परोक्ष प्रभाव से भी हो सकता है। मौसमी प्रवाह के अलावा, तापमान सीधे या प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से, मछलियों के झुंड बनाने की प्रवणता को भी संचालित करता है।

जल जीवियाँ जिस तापमान में जीवित रह सकते है, वे उसके पूर्व पर्यानुकूलन पर निर्भर करता है। इस कारण तापमान

पत्रव्यवहार : डॉ. एस. लक्ष्मी पिल्लै, वैज्ञानिक,
75, सान्तोम हाई रोड़, आर. ए. पुरम,
चेन्नई-28, तमिलनाडु

में अचानक होने वाले बदलाव जल जीवियों के लिए खतरनाक स्थापित हो सकता है। तापमान में धीरे-धीरे होने वाले बदलाव में जीवियाँ अपने-आप को पर्यनुकूलन कर सकते है।

तापमान में दीर्घकालीन बदलाव, सभी महासागर में एक जैसे नहीं होते है। एक ही महासागर के सभी भागों में भी तापमान में बदलाव देखने को मिलता है। यह बदलाव, ज्यादातर मुख्य जलीय प्रवाह की आकृति तथा स्थानीय मौसम विज्ञान विषयक स्थिति या दशा ही निश्चित करता है।

समुद्री जल जीवियाँ 0^0C-50^0C के तापमान में वास करते है। लेकिन कोई भी एक जाति इस तापमान के पूरे परिसर में जीवित नहीं रह सकते है। परन्तु पर्यानुकूलन के मार्ग में, जीवित रहने के लिए आवश्यक तापमान को बढाया जा सकता है। जीवियों को अचानक तापमान बदलने या स्थानान्तरित करने से, मृत्यु की संभावना है, चाहे वो तापमान उसके सहनीय परिसर में क्यों न हो।

ऊपर बताये गये बातों से, यह बहुत ही स्पष्ट है कि जल जीवियों के जीवनकाल में तापमान का अत्यधिक प्रभाव है तथा अन्य पर्यावरण कारकों के साथ तापमान भी एक मुख्य कारक है।

मुख्य शब्द/Keywords

अंडजनन - spawning

अपृष्ठवंशी/अकशेरुकी - invertebrate

खाद्येतर समुद्री जीव - औषध रसायनों की खजाना और उनका अनुरक्षण

आई. राजेन्द्रन
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन, केरल

जैविक रसायन पदार्थों का समुद्री वातावरण के संचार में योगदान

पृथ्वी के क्षेत्रफल में 75% समुद्र का है जिसमें विभिन्न तरह के पैड-पौधे एवं प्राणिजात अपनी अपनी जैव विभिन्नताओं के साथ समुद्री वातावरण के निर्णय करने में अपना योगदान देते हैं। विश्व भर प्रोटीन की चाहत को निभाने में खाद्य योग्य समुद्री मछलियों की अहं भूमिका है पर हाल में समुद्र का खाद्येतर जीव विशेषकर अकेशरुकी जैसे छिद्रिष्ठ (sponge), समुद्रव्यजन (gorgonians), महा शौवाल (macroalgae) सिलेन्टरेट्स (coelenterates), ब्राइयोजोअन (bryozoans), ट्यूनिकेट (tunicate), इकाइनोडेर्म (echinoderms) इत्यादि अनुसंधान का आकर्षण बन गया है। पहले इन जीवों को बेकार मानते थे। लेकिन अनुसंधान से यह पता चला कि इन जीवों से जो कार्बनिक पदार्थ (organic compounds) निकाला जाता है, वे समुद्री वातावरण में अपनी मुख्य भूमिका निभाता है। इन जीवों के सहजीवन से जुडे परजीवी सह संबंध जीवों की आत्मरक्षा, और औषधीय गुण आदि समुद्री पर्यावरण के लिए अत्यंत उपयोगी है।

यद्यपि इन जीवों का कोई खाद्य गुण नहीं है, ये कई तरह के रासायनिक पदार्थों का भंडारगृह है। समुद्री जीवों के बीच का आपसी संचार एवं रासायनिक अंतर्व्यवहार (chemical interaction) का काम सैकडों वर्षों से चली आ रही है। ये रासायनिक पदार्थ अपौष्टिक होने के साथ सूक्ष्म मात्रा की उपस्थिति दिखाती है। जीवों का सह-अस्तित्व और सह विकास में इनका योगदान होता है। इन रासायनिकों को तीन तरीकों से दिखा सकते हैं।

पत्रव्यवहार : श्री आइ. राजेन्द्रन, वैज्ञानिक (प्र.को.),
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान,
पी.बी. सं. 1603, कोचीन - 682018, केरल

अल्लोमोन	- पैदा कर रहे जीवों की भलाई करने वाला (allomones) रसायन उदाः विकर्षक (repellents)
कोईरोमोन	- प्राप्त करने वाले जीवन की सहायता करने वाले (kairomone) रसायन
फ़ेरोमोन	- अंतर्जाति जीवों को संचार का कारण होने वाले रसायन

जैव पदार्थों का मूल

जैव पदार्थों को मेजबान जीव द्वारा दो तरीके से अर्जित किए जाते हैं।

1. बाहर से प्राप्त करने वाले रसायन

   परजीवि (parasite) से प्राप्त करने वाला रसायन (पफ्फर मछली का टेट्रोडोटॉक्सिन (tetradotoxin)) खाद्य मार्ग से पाया गया एप्लाइसिय टॉक्सिन (aplysia toxin)

2. रसायन जो जीवों के अंदर ही जैवसंश्लेषण (biosynthesis) किया जाता है। (उदाः स्पंजस)

इन पदार्थों का क्रिया और इन के बनाने की प्रक्रिया के बारे में और खोज़ चल रहा है। इन जानकारियों से जीव जातियों का सह संबंध जीव वर्गीकरण की दृष्टि से भी ध्यान रखा जा रहा है। इन रासायनों का किस्म मामूली खनिज तेज़ाब से

जटिल पेप्टाइड तक होते हैं और कार्बनिक रसायन समूह का करीब सभी तरह के होते हैं जैसे कार्बोहाइड्रेट, लिपिड, स्टीराइड (steroid), टर्पीनाइड (terpenoid), क्षारोद (alkaloid), सुगंधित पदार्थ (aromatic compoud) आदि रासायनिक ढाँचे का अद्वितीय पदार्थ इन जीवों से प्राप्त होते हैं।

इन वस्तुओं का कच्चा रस निकाला जाता है और उसका जैव परीक्षण के (biassay) परामर्श से विभाजन एवं शुद्धीकरण करके अत्यधिक तेज पदार्थों का विश्लेषण होता है।

जैव औषध-शक्य पदार्थ (Compounds of Biomedical potential)

कुछ वर्तमान मानुषिक संक्रामक रोग औपचारिक एन्टीबयोटिक का प्रतिरोधक है। इन औषधि रोधक रोगों की इलाज के लिए कई और तरह के कार्बनिक पदार्थों की खोज़ की आवश्यकता पड़ती है। औषधि का आविष्कार प्रयत्न ने प्रदर्शित किया कि समुद्री रीढ़विहीन जीव धरती जीवों की तुलना में नई जैव पदार्थों का बहुप्रजनक स्रोत (prolific source) है। इन अद्वितीय ढाँचित समुद्री प्राकृतिक पदार्थों ने औषध वैज्ञानिकों और रसायन वैज्ञानिकों का ध्यान आकर्षण किया है। इन पदार्थों ने एन्टिबायाटिक एवं केन्द्र स्नायुतंत्र जाल की गडबड़ी की इलाज में अपना योगदान प्रमाणित किया है। कई रोगाणु विरोधी दवाओं के निर्माण संबंधी जाँच पडताल इन कार्बनिक पदार्थ से किये जाते हैं।

आधिकांश रीढ़विहीन जीव निस्यंदकजीव (फिल्टर फीडर) होते हैं और कई जीवाणु इन के शरीर में आसानी से संचयन किया जाता है। इन जीवाणुओं के आक्रमण से बचाने के लिए रीढ़विहीन जीव एन्टीबायोटिक पदार्थ को उत्पन्न करता है। ऐसे उत्पादित पदार्थों के द्वारा ये जीवों पर भक्षी पशुओं जैसे मछली, कर्कट, कच्छुआ, आदि से अपनी रक्षा करते हैं।

कुछ छिद्रिष्ठ प्रभावशाली पदार्थ को उत्पन्न करता है ताकि अपनी पडोसी छिद्रिष्ठ की वृद्धि इस के उपर न बढे सके। अतिद्रुत कोशिका संवर्धन को रोकने के इस पदार्थ से ऐन्टि कैंसर चिकित्सा की इलाज करने की जानकारी इसलिए आता है।

कुछ मुख्य रसायन पदार्थ जिनसे जीव प्रक्रिया उत्पन्न हो उनकी तालिका यहाँ दिया है।

क्र सं	रसायन पदार्थ	प्रकृति	स्रोत	जीवप्रक्रिया
1.	डाइडेम्नन (Dideomnin)	डेप्सिपेप्टाइड (Depsipeptide)	ट्यूनिकेट (Tunicate)	कैंसर रोधी (Anti Cancer)
2.	डोलास्टेटटिन (Dolastatin)	पेप्टाइड	ट्यूनिकेट	ट्यूमर रोधी
3.	प्लकोसाइड-ए (Plakoside-A)	मेक्रोलाइड (Macrolide)	छिद्रिष्ठ	इम्यूनोसप्रस्सन्ट (Immunosuppressent)
4.	इक्टिनअसिडिन (Ecteinascidin)	क्षारोद (Alkaloide)	ट्यूनिकेट	स्तन एवं अंडाशय संबंधी कैन्सर के इलाज में (Treatment of breast & ovarian cancer)
5.	पेन्टापोरिन (Pentaporin)		ब्राइयोजोअन	आन्टलमिन्टिक (Anthelmintic)
6.	टोप्सेन्टिन (Topsentin)	छिद्रिष्ठ		एन्टिइन्फलमेटरी (Antiinflammatory
7.	कोनोटाक्सिन	पेप्टाइड	घोंघा (Snail)	वेदनाहारी औषधि (Pain killer)

अन्य कर्मक्षेत्र का जाँच पड़ताल

समुद्री रसायन पदार्थ अपनी औषधि गुणों के अलावा अन्य प्रक्रिया के काम में भी प्रयोग में आता है।

1. समुद्री जीवाणु 'मराइनोबेक्टर हाइड्रोकार्बनक्लास्टिकस' (marinobactor hydrocarbonclasticus) के पदार्थ के द्वारा कच्चे तेल का विघटन या अवनति

2. छिद्रिष्ठ 'सिम्बासेटला हप्परी' (cymbastella hoperi) से निकला डाइटेर्पिन का मलेरिया रोधी प्रक्रिया

3. बायोपॉलिमर जिसकी जानकारी सीपी के संस्तर में चिपकने के स्वभाव से मिलता है उस पर हाल का ध्यान आकृष्ट हुआ है।

यौगिकों का उत्पादन

प्रकृति में ये यौगिक बहुत कम मात्रा में उपलब्ध है। अधिक मात्रा में पाने के लिए इन समुद्री जीव-फसल की कटाई (harvesting of source organism) करना पड़ता है। ऐसे जीवों का फसल काट व्यवहार्य विकल्प नहीं है, इसका नतीजा समुद्र के वातावरण का बडा नुकसान भी होता है। इसलिए जब किसी एक पदार्थ की अंतर्निहित शक्ति स्थापित होता है, उस पदार्थ का उत्पादन धारणीय और नियंत्रणीय ढंग से करने की चुनौती अनुसंधान कर्मियों के सामने पडता है।

उत्पादन करने के कुछ तरीके नीचे दिया गया है:

- आर्थिक संश्लेषणात्मक कदमों के साथ किया हुआ रासायनिक संश्लेषण
- चुनी गई समुद्री जीव जाति का संवर्धन
- एनज़ाइम (enzyme) के द्वारा होते बायोसिन्थसिस (biosynthesis)
- प्राकृतिक स्रोत का धारणीय और नियंत्रणीय इस्तेमाल
- किण्वन (fermentation)
- आनुवंशिक हस्तक्षेप (genetic intervention)

निष्कर्ष

यद्यपि कुछ ही समुद्र के पदार्थ इस्तेमाल के लिए बाज़ार में है, कई और कच्चे नये पदार्थ नैदानिक परीक्षणों (clinical trails) की तालिका में लगे हुए हैं। इन समुद्री रासायनिक विविधता को श्रेष्ठ रोगोपचारक शक्ति के रूप में बदलने में अतिरिक्त ध्यान और प्रयत्न विश्व भर हो रहे हैं।

मुख्य शब्द/Keywords

प्राणिजात - fauna
पादप समूह - flora
अकशेरुकी/रीढ़विहीन जीव - invertebrate
स्पंज/छिद्रिष्ठ - sponge
समुद्र व्यंजन - gorgonian
महा शैवाल - macroalgae
कार्बनिक पदार्थ - organic compound
परजीवी - parasite
जैव पदार्थ - bio products
परपोषी - host organism
जैव संश्लेषण - biosynthesis
खनिज तेज़ाब - inorganic acid
क्षारोद - alkaloid
सुगंधित पदार्थ - aromatic compound
कच्चा रस - crude extract
जैव औषध पदार्थ - bio medical compound
बहु प्रजननक स्रोत - prolific source
निस्यंदक जीव - filter feeder
परभक्षी/जीव भक्षी - predator
जैव सक्रिय - bio active
मेजबान - host

लिपोफ्यूसिन-पर्यावरण प्रदूषण का जैव सूचक

मेरी के. माणिशेरी
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन, केरल

भूमिका

मछली के ऊतकों में पाए जाने वाले वर्णकों में मेलानिन, हीमोसिडेरिन और लिपिड वर्णक लिपोफ्यूसिन प्रमुख हैं। असंतृप्त ऊतक लिपिड या लिपोप्रोटीन के ओक्सीकरण से ये वर्णक बन जाते हैं। सामान्यतः इस समय लाइसोसोमी प्रक्रिया के अंतिम स्तर में कोशिका में होने वाले टूट-फूट भी होता है। जैव झिल्लिकाओं में लिपिड का रूपायन से इनकी संगठित संरचना में बाधा होता है।

जीवों में बुढाना और आहार क्रम प्रतिबल या आविषालू पर्यावरणीय घटकों द्वारा लिपोफ्यूसिन कणिकाएं उत्पन्न होती हैं। कोशिका द्रव में लाइसोसोम द्वारा होने वाले लिपोप्रोटीन झिल्लिका घटकों की स्वभोजिता के फलस्वरूप लिपोफ्यूसिन बन जाता है। इस तरह जैव झिल्लिकाओं में लिपिड पेरोक्साइड के रूपायन से इनकी आधारभूत संरचना गडबड होता है और जीव के सामान्य कार्यों पर प्रभाव डालता भी है। इसके विपरीत यह भी रिपोर्ट की गयी है कि लिपोफ्यूसिन कणिकाओं में धातुओं को जटिल बनाने की क्षमता है जिस से कोशिकाओं में ये धातु उपलब्ध नहीं होते हैं। तृतीयक लाइसोसोम की संख्या बढ़ने पर लिपोफ्यूसिन घटकों की बढ़ती होती है जिस से पर्यावरण से शरीर में प्रवेश करने वाले आविषाक्त धातुओं को निकालने में सहायक होता है। पर्यावरण के भारी धातुओं से क्रस्टेशियनों पर पडने वाले विषालू प्रभावों पर किए गए अध्ययन बहुत सीमित हैं। फिर भी, *पेनिअस मोनोडोन, पी. जापोनिकस* और *माक्रो ब्राकियम रोसेनबर्गी* पर कोप्पर के प्रभाव पर अध्ययन किया गया है। मेर्क्युरी, जिसकी जीव विज्ञानीय प्रक्रियाएं स्थापित न होने पर भी, कम मात्रा में जीव विज्ञानीय व्यवस्था पर प्रभाव डालता है। *क्रान्गोन क्रान्गोन, पालिमोनेप्स प्यूजियो, पी. जापोनिकस, पी. अस्टेकस, कल्लियानासा टाइरिना* आदि पर मेर्क्युरी के विषालू प्रभाव पर अध्ययन किया गया है। पर्यावरण में दिखाए जाने वाले भारी धातु जीव के शरीर में संचित होकर समुद्री खाद्य श्रृंखला के उच्चतर पोषण स्तर में जैव आवर्धन का कारण बन जाता है, यह अत्यंत गंभीरता का विषय है। इस प्रक्रिया में क्रस्टेशियन जो समुद्री खाद्य श्रृंखला की प्रमुख कड़ी है, प्रमुख भूमिका निभाते हैं। इस परिवेश से, उष्णकटिबंधीय समुद्र का एक वाणिज्यिक प्रमुख पेनिआइड झींगा *मेटापेनियस डोबसोनी* के प्रमुख अंग-हेपटोपान्क्रियास में लिपोफ्यूसिन कणिकाओं के जमाव और इस पर कोपर और मेर्क्युरी के प्रभाव पर विस्तृत अध्ययन चलाया गया।

कार्यप्रणाली

तुंड (रोस्ट्रम) के अग्र से पुच्छखंड (टेल्सन) के अग्र तक 25-35 मि मी की लंबाई वाले किशोर *एम. डोबसोनी* में अध्ययन चलाया गया। इस के लिए परीक्षणाधीन झींगों को पालन तालाब से ऑक्सिजन भरी गई पोलिथीन थैलियों में प्रयोगशाला तक लाकर 20 ± 2 पी पी टी लवणता में अनुकूलन किया गया। इसके बाद इन्हें इच्छानुसार सीपी मांस से खिलाया।

पत्रव्यवहार : डॉ. (श्रीमती) मेरी के. माणिशेरी, प्रधान वैज्ञानिक,
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान,
पी बी सं 1603, कोच्ची - 682 018, केरल

10 जीवों वाले को बैचों में 0.05 और 0.15 पी पी एम कोपर और 0.005 और 0.015 पी पी एम मेर्क्युरी होने वाले अच्छी तरह वातन और अर्ध बहाव होनेवाले व्यवस्था में और 28 ± 2^0C साधारण ऊष्मा में 15 दिनों तक रखा गया। विभिन्न उपचार और नियंत्रण के लिए तीन बार यह परीक्षण किया गया। भारी धातुओं के स्रोत के रूप में कोपर सल्फेट और मेर्क्यूरिक क्लोराइड को उपयुक्त किया गया। प्रति 24 घंटों में अधिक पड गए खाद्य पदार्थ और विसर्ज्य वस्तुओं को साइफन करके निकाल दिया गया। विभिन्न उपचारों के तीनों बारियों में से अंतर निर्मोचन अवस्था के एक जीव को हिस्टोकेमिकल अध्ययन के लिए चुना गया। हेपाटोपान्क्रियाटिक ऊतक को तरल नाइट्रोजन उपयुक्त करके हेक्सेन में जमा किया था। -20 ± 1^0C चेम्बर तापमान में अनुरक्षित ब्राइट क्रयोस्टाट उपयुक्त करके 10 माइक्रोन मोटाई के 10 सेक्शन्स लिए गए। श्मोल प्रतिक्रिया (Schmorl Reaction) उपयुक्त करके विभिन्न सेक्शनों के लिपोफ्यूसिन घटकों का निर्धारण किया गया। अभिरंजन के लिए फेरिक क्लोराइड और पोटासियम फेरीसयनाइड का प्रतिक्रिया माध्यम उपयुक्त किया गया। ग्लिसरिन जेली नामक जलीय मध्यम से सेक्शनों को माउन्ट किया गया। नीले रंग के प्रतिक्रिया उत्पादों के रूप में लिपोफ्यूसिन कणिकाएं दिखाई पडी। माइक्रोस्कोप की सहायता से इनके आकार और प्रचुरता पर निर्धारण किया गया।

प्रमुख परिणाम

हेपाटोपान्क्रियाटिक नलिकाओं के बाह्य (परिघीय) भाग में लिपोफ्यूसिन घटक न्यूनतम थे। यह ज्ञात है कि शतपाद क्रस्टेशियन के हेपाटोपानक्रियास के कोशिका वर्गीकरण में क्रमिकता है, फिर भी छोटे भ्रूणीय कोशिकाएं नलिका के परिधीय भाग में और वयस्क कोशिकाएं मध्य या निकट भाग में दिखाए पडते हैं। कम वर्गीकृत और दूर भागों में स्थित भ्रूणीय कोशिकाओं में लिपोफ्यूसिन कणिकाओं युक्त बडे द्वितीयक और तृतीयक लाइसोसोम नहीं थे। इसके विरुद्ध, नलिका के मध्य और निकट भागों की कोशिकाओं में अधिक द्वितीय लाइसोसोम और अवशिष्ट पिंड दिखाए पडे। इन कोशिकाओं में लिपोफ्यूसिन की प्रचुरता का संकेत करनेवाले रंग की गाढ़ता भी उच्च थी। रंग की गाढ़ता से व्यक्त होनेवाले लिपोफ्यूसिन कणिकाओं के संचयन से धातु अनुक्रम वाली कणिकाओं का संकेत मिलता है।

यह मालूम पडा है कि नियंत्रित जीवों के हेपाटोपान्क्रियास में लिपोफ्यूसिन प्रक्रिया सामान्यतः अच्छी है। नियंत्रित जीवों में लिपोफ्यूसिन संचय पर मेर्क्युरी का संघात सीमित था। कोपर में परीक्षित जीवों में लिपोफ्यूसिन की तीव्रता अधिक देखी गयी। 0.05 पी पी एम कोपर में परीक्षित जीवों में भी यह तीव्रता अधिक देखी गयी क्योंकि इनकी नलिकाओं के मध्य और निकट भागों की उपकला कोशिका में लिपोफ्यूसिन कणिकाएं भारी मात्रा में उपस्थित हैं। प्रचुरता वर्णक कणिकाओं की संख्या के आधार पर नहीं, बल्कि उनके वर्धित आकार के आधार पर व्यक्त होती है। 0.05 और 0.15 पी पी एम कोप्पर से उपचार किए गए जीवों में हेपाटोपान्क्रियाटिक नलिका के दूर भाग में रंग और द्वितीयक और तृतीयक लाइसोसोम का अभाव दृश्यमान था, बल्कि निकटस्थ भाग में जहाँ नलिका साधारण लूमेन की ओर खुलती है, इस का विपरीत प्रभाव देखा गया। प्राथमिक पुटिका या अन्य कोशिका भाग लाइसोसोम के साथ मिलकर मल्टीवेसिकुलार बोडी याने तृतीयक लाइसोसोम बनने पर होने वाले लाइसोसोमल अवनति के फलस्वरूप लिपोफ्यूसिन कणिकाएं बनती है। जैव रासायनिक अध्ययन यह सुझाव देता है कि लिपोफ्यूसिन स्वतंत्र मूलकों द्वारा पोली अनसाचुरेटड झिल्लिका का ऑक्सीकरण होने पर मिलनेवाला अंतिम उत्पाद है। वास्तव में ये वर्णक कणिकाएं सभी जीवों में सर्वव्यापी हैं। ये अध्ययन में साबित होने के समान नियंत्रित जीव के हेपाटोपान्क्रियाटिक कोशिका में लिपोफ्यूसिन की उपस्थिति, चाहे कम मात्रा में हो, व्यक्त करती है। तृतीयक लाइसोसोम में भारी धातुओं की अधिक मात्रा को निराविषी बनाने की क्षमता है। अध्ययनों से यह व्यक्त हुआ कि शंबु को कोपर के साथ उपचार करने पर

इनकी पाचक कोशिका में लिपोफ्यूसिन की बढ़ती हुई है और विसर्ज्य पदार्थों के एक्सोसाइटोसिस द्वारा लिपोफ्यूसिन की धातुओं को स्थायी रूप में निकाल कर दिया जा सका। *टोर्पिडो मर्मोरेटा* की रीढ़ गुच्छिका में न्यूरल लिपोफ्यूसिन के रूपायन में कोपर के सम्मिलन पर रिपोर्ट की गयी है। कोप्पर स्वतंत्र मूलकों में लिपोपेरोक्सिडेटीव प्रतिक्रिया के लिए प्रेरित करता है और इसके फलस्वरूप लिपोफ्यूसिन कणिकाओं की संख्या और औसतन आकार बढ़ जाते हैं। कोप्पर से उपचार किए गए *एम. डोबसोनी* की हेपाटोपन्क्रियाटिक कोशिकाओं में बडे आकार वाले लिपोफ्यूसिन वर्णक कणिकाओं के संचयन का यह परिणाम अन्य लेखकारों के आकलनों के समान देखा गया है। 0.05 पी पी एम कोप्पर से उपचारित *एम. डोबसोनी* में 0.15 पी पी एम कोप्पर से उपचारित जीवों की अपेक्षा लिपोफ्यूसिन कणिकाओं का अधिकतर संचयन देखा गया जो इस धातु के दो दशा के प्रभाव का संकेत करता है।

कोप्पर की अपेक्षा अवघात स्तर में मेर्क्युरी का प्रयोग करने पर *एम. डोबसोनी* के हेपाटोपन्क्रियास की उपकला कोशिकाओं में लिपोफ्यूसिन वर्णक कणिकाओं का कम संचय होता है। इसका कारण सम्मिलित धातु के आधार पर कोशिकाओं में अपचयोपचय संतुलन और लिपिड परऑक्सिडेशन उद्दीपन प्रक्रिया में होनेवाला परिवर्तन है। शंबुओं के ऊतक में लिपिड परऑक्सिडेशन की दर पर विभिन्न भारी धातुओं के प्रभाव पर किए गए इस तरह के अध्ययन में यह साबित हुआ कि कैड्मियम या ज़िंक के विरुद्ध, कोप्पर में परऑक्सीकरण प्रक्रिया का उद्दीपन करने वाले अपचयोपचय संतुलन परिवर्तित करने और लिपोफ्यूसिन कणिकाओं के रूपायन के प्रेरित करने की क्षमता है। इस से लिपोफ्यूसिन कणिकाओं के रूपायन में भारी धातुओं के विभिन्न प्रभाव व्यक्त होते हैं। विभिन्न लेखकों ने लिपोफ्यूसिन कणिकाओं के उत्पादन और संचयन और सूक्ष्मजीवों की वयस्कता पर भारी धातुओं के प्रभाव पर रिपोर्ट की है।

निष्कर्ष

यह मालूम पडा है कि समुद्र जीवों के ऊतकों में लिपोफ्यूसिन वर्णक कणिकाओं की उपस्थिति और प्रचुरता समुद्री पर्यावरण में होने वाले धातु प्रदूषण के स्तर का संकेत करती है। अयुग्मित इलक्ट्रोन होनेवाले सभी संक्रमण धातु, जो मूलक बन होते है, लिपोफ्यूसिनोजेनिसिस का उद्दीपन करते हैं। प्रदूषण का स्तर लिपोफ्यूसिन कणिकाओं की मात्रा के अनुपात पर आश्रित है और इस संकेत से इन धातुओं द्वारा होनेवाले पर्यावरणीय प्रदूषण आंका जा सकता है। *एम. डोबसोनी* पर किए गए वर्तमान अध्ययन से यह व्यक्त चित्रण मिल सकता है कि कोप्पर या मेर्क्युरी उद्दीपित जीवों में लिपोफ्यूसिन की मात्रा नियंत्रित जीवों से बहुत अधिक है इसलिए इन्हें ज़ीनोबयोटिक के अवघात स्तर से होने वाले दीर्घकालिक दबाव के निर्धारण के सूचक के रूप में लिया जा सकता है।

मुख्य शब्द/Keywords.
जैव झिल्लिका - biological membranes
बुढ़ाना - ageing
कोशिकाद्रव्य - cytoplasm
स्वभोजिता - autophagy
जैव आवर्धन - bio-magnification
तुंड - rostrum
पुच्छखंड - telson
अभिरंजन - staining
अवशिष्ट पिंड - residual body
उपकला कोशिका - epithelial cell
प्राथमिक पुटिका - primary vesicle
परऑक्सिकरण - peroxidation
रीढ़ गुच्छिका - spinal ganglia
अपचयोपचय - redox
अयुग्मित - unpaired
अवघात स्तर - sublethal स्तर

पर्यावरण परिरक्षण का एक केरल प्रतिमान

विपिन कुमार वी.पी. और आर. सत्यदास
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन, केरल

केरल के कालिकट जिला के पय्योली स्थान के कोलवीपालम गाँव के मछुओं के समाज-आर्थिक परिवेश और आजीविका पर गहन तौर पर विश्लेषण करते हुए एक अध्ययन किया गया। अध्ययन का मुख्य उद्देश्य समुद्री मात्स्यिकी क्षेत्र के विभिन्न मध्यवर्ती लोगों पर समाज-आर्थिक सूचना इकट्ठा करना और तटीय मछुओं की आजीविका स्थितियों का निर्धारण करना और मध्यवर्ती लोगों के उन्नयन के लिए प्रौद्योगिकीय आवश्यकताओं का पहचान करना और प्राथमिकता देना था। इस स्थान के कुछ लोगों द्वारा समुद्री कच्छप संरक्षण पर किए गए अध्ययन पर इस लेख में प्रकाश डाला है।

केरल के कालिकट जिला के कोलविपालम तट पर किया गया अध्ययन

उत्तर केरल में, कालिकट जिला के पय्योली के निकट कोलवीपालम समुद्र तट में नीडन समय में समुद्री कच्छप बडे पैमाने में इकट्ठे होते हैं। नीडन मौसम में ये कच्छप तट पर एकत्र होकर अंडजनन करते हैं। अस्सी के दशक के आरंभ में यहाँ के मछुए लोग समुद्री कच्छपों का मांस और अंड खाते थे और इनका शोषण करते थे। उसी समय प्रति कि.ग्रा. के लिए 20 रुपए की दर में कच्छप मांस की बिक्री भी की जाती थी। लेकिन वर्ष 1992 में जब समाचार पत्रों में यह समाचार छपा गया कि समुद्री कच्छप खतरे में पड गए जीव हैं तब उसी गाँव के नागरिक स्वयं इस समुद्री संपदा के संरक्षण के लिए आगे आये। पहले अंडों के 50% को स्फुटन करने दिया और बाकी खाने के लिए भी लिया गया। लेकिन बाद में इस संपदा के परिरक्षण की आवश्यकता पर लोग समझदार हो गए और संग्रहित पूरे अंडों को स्फुटन करने दिया। बाद में इस संघ का नाम *तीरम प्रकृति परिरक्षण संघ* जिसका मतलब तटीय प्रकृति का संरक्षण है, बन गया बाद में समुद्री संपदा का परिरक्षण करने वाले इस गतिशील संघ के बारे में समाचार पत्रों में कई रिपोर्टें आयी।

जब *प्रकृति परिरक्षण संघ* की विशेषताएं मशहूर होने लगी तब केरल वन विभाग, केरल वन विद्या परियोजना, कच्छपों का आवास प्रबंधन, प्रशिक्षण, अनुसंधान तथा कार्रवाई का मलबार तटीय संस्थान जैसे गैर सरकारी संगठन, सी एम एफ आर आइ, आइ आई एस आर जैसे केन्द्रीय अनुसंधान संस्थान आदि ने समुद्री कच्छपों के परिरक्षण और प्रबंधन की आवश्यकता पर जनता को अवगाह देना शुरू किया। इस के तुरंत बाद वर्ष 1992 में अवगाह कार्यक्रम का असर लोगों में पडने लगा और वर्ष 1998 में केरल वन विभाग ने दो हैचरियों की स्थापना करके लालटेन/टोर्च आदि प्रदान किए और छः सदस्यों को दैनिक मज़दूरी भी दी। इस वर्ष से लेकर संघ का न्यायिक रूप से पंजीकरण हुआ और कार्यविधियाँ क्रमिक रूप से होने लगी। संघ ने इस स्थान को कच्छपों के प्रजनन स्थान के रूप में विकसित किया और वहाँ की प्राकृतिक संपदाओं का

पत्रव्यवहार : डॉ. विपिन कुमार वी.पी., वैज्ञानिक,
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान,
पी बी सं 1603, कोच्ची - 682 018, केरल

परिरक्षण किया। मैंग्रोव का संरक्षण और परिरक्षण और अवैध रूप से रेत का खनन संघ के सदस्यों के सामने पड गए दो प्रमुख मुकाबले थे और इस वजह से उन्हें रेत का खनन करने वाले ट्रेड यूनियन के लोगों के साथ संघर्ष करना पडा। संघ के सदस्य नीडन मौसम में स्फुटन होने वाले अंडों का आंकडा संग्रहित करते हैं (सारणी-1) लेकिन समुद्री अपरदन के कारण हैचरियाँ खराब हो गयीं। वर्ष 1992 के बाद स्थापित हैचरियों का इस प्रकार नाश हो गया और समुद्र तट 350 मीटर तक शुष्क हो गया।

सारणी-1 कोलवी तीरम कच्छप परिरक्षण संघ द्वारा संग्रहित अंडों के स्फुटन का आंकडा (1992-2004)

वर्ष	कच्छपों की संख्या	अंडों की संख्या	अंडों से निकले छोटे कच्छपों की संख्या
1992-1998	82	7500	5000
1998-1999	52	4501	3328
1999-2000	65	5843	4900
2000-2001	65	6264	5508
2001-2002	51	5000	4000
2002-2003	47	5028	4123
2003-2004	49	4072	3877
कुल	411	39,108	30,736

रेत खनन से समुद्र तट को नंगा करने की हीन वृत्ति का विरोध करने वाले कच्छप प्रेमियों के प्रयास को निहित स्वार्थ वाले प्रबल वर्गों द्वारा बेकार कर दिया। इस मामले पर प्रकृति परिरक्षण ग्रूप द्वारा उच्च न्यायालय में एक याचिका फाइल की गई और न्यायालय ने तात्कालिक रूप से रेत खनन रोकने का आदेश दिया। लेकिन, रेत खनन रोकने पर आजीविका पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभाव पर ज़ोर करते हुए 977 व्यक्तियों द्वारा हस्ताक्षर की गई एक और याचिका न्यायालय में दी गई। अंत में जिलाधीश ने यह आदेश दिया कि तटीय मेखला नियमन अधिनियम ने 500 मीटर क्षेत्र के अंदर खनन की अनुमति नहीं दी है फिर भी उस क्षेत्र की विशेषताओं को मानते हुए 200 मीटर के अंदर रोक लागू किया गया है। उस आदेश के अनुसार वडकरा नगरपालिका और खनन एवं भूविज्ञान विभाग द्वारा सीमांकन करने की शर्त पर 25 लोरी भर रेत का खनन करने की अनुमति दी गई। लेकिन *तीरम* प्रकृति परिरक्षण संघ के सदस्यों का कहना है कि प्रति दिन सभी मार्गदर्शनों को नगण्य करते हुए अनुमत्य मात्रा से भी अधिक रेत का खनन करता रहता है और इस तरह के विवेकहीन रेत खनन से कच्छप के नीडन स्थान का नाश होता है। अब केवल एक नीडन स्थान बाकी पड गया है और अगर उचित कार्यवाई नहीं की जाती है तो वह भी कच्छप नीडन मानचित्र से गायब होने की संभावना है।

कई प्रकार की बाधाएं और समस्याएं सामने आने के बावजूद संघ के सदस्यों द्वारा कच्छपों के परिरक्षण के लिए कठिन प्रयास किया गया और अंडों से निकले लगभग 30,000 छोटे कच्छपों को समुद्र में मुक्त किया गया। संघ के सदस्य आगामी भविष्य में और भी बडा *अरिबाडा* होने की प्रत्याशा में हैं।

समुद्री कच्छपों के परिरक्षण के बारे में लोगों के अवगाह का निर्धारण करने केलिए भागीदारी ग्रामीण निर्धारण कार्यक्रम द्वारा 20 मछुओं के साथ साक्षात्कार करने पर ज्ञात हो गया कि वे लोग आवास तंत्र में कच्छपों की उपस्थिति की मुख्य आवश्यकता पर जानकार थे (सारणी-2)

सारणी-2 अवगाह कार्यक्रम की स्थिति (20 मछुओं के आधार पर)

सं	समुद्री कच्छपों का परिरक्षण क्यों	प्रतिक्रिया दिए गए लोगों की संख्या जी हाँ	प्रतिक्रिया दिए गए लोगों की संख्या जी नहीं
1.	खतरे में पड गई जातियों के नाश का नियंत्रण	14	6
2.	पर्यावरणीय टिकाऊपन	11	9
3.	आलंकारिक सामग्रियों, चश्मा फ्रैम, वानिटी बैग आदि के निर्माण के लिए कच्छप कवच का उपयोग	17	3
4.	मछली जीव संख्या बढाए जाने के लिए विषकारी खुम्भी खाना	18	2
5.	आवासीय संतुलन	16	4
6.	पर्यटकों की शक्यता	10	10
7.	धार्मिक प्रधानता	9	11

कच्छपों के प्राकृतिक आवास सजाने के लिए संघ के सदस्यों ने मैंग्रोव के पौधों का रोपण किया है। इसके अतिरिक्त वन विभाग के सहयोग से वन वृक्षों का पौधा गृह भी सजाया है जिसमें 35 जातियों की लगभग 30,000 छोटे पौधों को उगाया गया है, कभी कभी ये लोग अवधारणा अभियान आयोजित करते हैं, प्रकृति संरक्षण और मैंग्रोव परिरक्षण पर चलचित्र और स्लाइड का प्रदर्शन करते रहते है।

निष्कर्ष

इस अध्ययन में केरल राज्य के कालिकट जिला के पय्योली के निकट कोलवीपालम समुद्र तट में प्रकृति प्रेमियों और मछुओं के संयुक्त सहयोग से किए गए समुद्री कच्छप परिरक्षण और प्रबंध कार्यक्रमों के प्रमुख अंश सम्मिलित किए गए हैं। सामाजिक परिप्रेक्ष्य में देखे जाएं तो कच्छप संपदा प्रबंधन जनता का काम है, कच्छपों का नहीं, यह प्रयास जन केन्द्रित होना चाहिए और इस कार्यक्रम में सभी मध्यवर्ती लोगों को भागीदार बनाने के लिए एक भागीदारी प्रबंधन का विकास करने का प्रयास भी किया जाना चाहिए। टिकाऊ आधार पर कच्छपों का परिरक्षण और प्रबंधन बढ़ाएं जाने के लिए सामूहिक कार्रवाई उठाई जाने के लिए केरल में किए गए कच्छप परिरक्षण कार्यक्रम को नमूना के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। तटीय क्षेत्रों के टिकाऊ विकास केलिए बनाए जाने वाली यदृच्छ योजनाओं, जो हमारे, प्राकृतिक आवास और जैवविविधता को प्रभावित करते हैं, के रूपायन की अपेक्षा वैज्ञानिक और भूविज्ञानीय सूचना व्यवस्थाओं के आधार पर समुद्र भित्तियों, पोताश्रय, मछली पकड केन्द्र, जलकृषि खेत, खनन स्थान, नगर विकास आदि को सम्मिलित करके पूरे तटीय भागों में समग्र रूप से एक योजना तैयार करके स्तरीय आधार पर इस का कार्यान्वयन भी किया जाना आवश्यक है।

मुख्य शब्द/Keywords

कच्छप - turtle

अरिबाडा - group arrival of turtles for nesting in sea shores (उड़ीसा के प्रसंग में)

जलाशय...... पर्यावरण का नया आयाम !

दीपक कोठियाल, सीमा बंगवाल, प्रो.प्रेम वरैत
गोविन्द वल्लभ पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पन्तनगर, उत्तरांचल

कई शताब्दियों से जल मानव का सर्वप्रिय स्रोत रहा है, जिसे वह सर्वदा सक्षम, अतुलनीय, त ऊर्जा के अपार के भण्डार के रूप में अभिप्राय मानता आया है। संस्कृत की महान सूक्ति "जलतिजिवयति लोकन्ति" अर्थात जल ही जीवन का स्रोत है इसका पूर्णरूपेण प्रतिबिम्ब है। मानव ने अपने विभिन्न प्रयोजनों हेतू सदैव ही जल का बहुतायत में प्रयोग किया है। फिर चाहे वह पेयजल का स्वरुप हो, कृषि आपूर्ति का, औद्योगिकी का अथवा अभियांत्रिकी का। ऐसा ही एक स्वरुप है बाँध का निर्माण! जलका संरक्षण कर उसे विभिन्न कार्यों हेतु प्रयोग करना वास्तव में मानव का एक उचित ध्येय रहा है, जिसका प्रमाण है देश की विभिन्न जलधाराओं पर अपने विशालरुप को लिये हुये ये बाँध, जो अपनी विशालता के आधार पर देश की प्रगति के रूप को प्रदर्शित कर रहे हैं।

भारतवर्ष में प्रतिवर्ष अनुमानतः 85% बारिश तीन और साढ़ेतीन (3-3½) महीने के समय अन्तराल पर हो जाती है एवं शेष 15% वर्ष के अन्य महीनों में पूर्ण होती है। इसी से भारत की विविधता का आभास हो जाता है कि किस तरह तीन महीनों में जल की समाधि व शेष में सूखे की भयानकता देखने को मिलती है।

'उत्तरांचल' हिमनदों का राज्य है। ये सभी हिमनद हिमालय की गोद से ही प्रवाहित होते हैं। गंगा उत्तरांचल की एक महत्वपूर्ण हिमनद है। यह भागीरथी के नाम से गंगोत्री हिमनद के गोमुख (3129 किमी. ऊपर msl से) नामक स्थान से निकलती है तथा 220 कि.मी. के पथ को पारकर हरिद्वार के समतल क्षेत्र में पहुँचती है। इसी के टिहरी नामक स्थान पर बन रहा है - "टिहरी डेंम"! जिसे आधार बनाकर किये गये अध्ययन इस प्रपत्र का विषय है।

पत्रव्यवहार : दीपक कोठियाल
मत्स्य विज्ञान महाविद्यालय, गो.व. पन्त कृषि एवं प्रौद्यो. विश्वविद्यालय पन्तनगर, उत्तरांचल

गंगा-उत्तरांचल की एक महत्वपूर्ण हिमनद

गढ़वाल हिमालय, मध्य हिमालय के पश्चिमी भाग को प्रदर्शित करता है। भौगोलिक तथ्यों के अनुसार यह 29026 से 37028 N अक्षांस तथा 77049^0 से 8006 E देशान्तर के मध्य स्थित है। इसके अन्तर्गत विभिन्न नदी स्रोतों का अपार भण्डार है जिसमें भागीरथी, अलकनन्दा, गंगा, यमुना, पश्चिमी रामगंगा महत्वपूर्ण नदियां हैं। अलकनन्दा सबसे महत्वपूर्ण नदी है जिसकी लम्बाई 240 कि.मी. है। यह यहां की सबसे लम्बी नदी है।

टिहरी डैम की स्थिति

टिहरी डैम गढ़वाल क्षेत्र के टिहरी नामक स्थान पर दो नदियों भिलंगना एवं भागीरथी के संगम पर बना है जिसका निर्माण कार्य वर्तमान समय में भी कार्यरत है तथा यह डैम निकट समय में अपनी पूर्णता की चरमसीमा की ओर अग्रसरित है। इस डैम का निर्माण कार्य भारत सरकार, राज्य सरकार तथा टिहरी हाइड्रो डेवलपमेंट कार्पोरेशन के संयुक्त प्रयासों के आधार पर किया गया है।

मुख्य तथ्य

- यह डैम 260.50 m की ऊँचाई का चट्टानीकृत निर्मित डैम है जो टिहरी शहर से 1.5 कि.मी. की दूरी पर नदी

के सम्मिलित प्रवाह की ओर है।

- इसमें दो भूमिगत पावरहाउस हैं जिनकी क्षमता 1000 MW है।

    4 X 250 MW कन्वैन्शनल पावर प्लान्ट

    4 X 250 MW पम्पड स्टोरेज प्लान्ट

- दूसरे भाग में 103.50 m की ऊंचाई का कंकरीट का बना डैम है, जिसकी क्षमता 400 MW है तथा यह भाग टिहरी से 22 कि.मी. नदी के प्रवाह की ओर स्थित है।

मुख्य विशेषतायें :

	टिहरी डैम	कोटेश्वर डैम
कैचमेन्ट एरिया (वर्ग कि.मी.)	7511.00	....
उच्चतम बाढ़स्तर (मी.)	835.00	615.00
पूर्ण जलाशयस्तर (मी.)	830.00	612.50
निम्नतम निकास स्तर (मी.)	740.00	598.50
अनुमानित एकत्रिकरण (मिलियन धन मी.)	3540.00	86.00
वर्तमान स्थिति (मिलियन धन मी.)	2616.00	36.00

टिहरी डैम के निकटवर्ती क्षेत्र में कैचमेन्ट एरिया 7511 वर्ग कि.मी. का है जिसमें से 2323 वर्ग कि.मी. बर्फ से आच्छादित है। शेष भाग में कृषियोग्य भूमि, जंगल, एवं चट्टानीय तट हैं।

विभिन्न कारकों हेतु इन बाँधो के प्रयोग से एक ओर जहाँ विभिन्न प्रकार के फायदे होते हैं वहीं दूसरी ओर कई प्रकार की पर्यावरणीय हानियों भी होती हैं जिनमें मुख्य है बाँधों द्वारा वायु प्रदूषण का होना।

जलाशय - प्रदूषण कारक

जलाशयों को सर्वथा ग्रीन हाउस प्रभाव को प्रेरित करने वाले गेंसों जैसे कार्बन डाई आक्साइड एवं मीथेन के स्रोत के रुप में इंगित किया गया है। जिसमें मेथेन का अग्रिम योगदान होता है। जलाशयों के निर्माण के पश्चात उसमें जलमग्न होने वाले विभिन्न प्रकार के पदार्थों पर बैक्टीरिया उत्पन्न हो जाते हैं। तथा ये वैक्टिरिया उन पदार्थों को विभिन्न घटकों में विभाजित कर देते हैं। जब तक O_2 की उपस्थिति पूर्णतः रहती है, यह प्रक्रिया शुद्ध रुप से चलती रहती है। किन्तु जैसे ही O_2 की कमी होती है CO_2 व मीथेन बनने लगती है जिसमें CH_4 की सान्द्रता अत्यधिक मात्रा में होती है। यह CO_2 की अपेक्षा ग्रीन हाउस प्रभाव उत्पन्न करने में कई गुना सक्षम होती है तथा जब ये मेथेन हाइड्रो पावर इलैक्ट्रिक के पावर हाउस से होकर गुजरती है तो

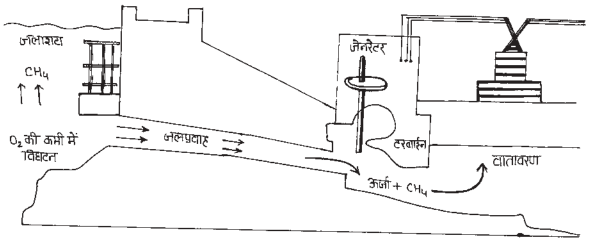

अपने मूलरूप से कई गुना हानिकारक हो जाती है। मेथेन के इस निष्कासन को निम्नवत भी देखा जा सकता है।

इस प्रकार देखा जा सकता है कि एक डैम जहाँ प्रगति पथ का वाहक है वहीं दूसरी ओर ग्लोबल वार्मिंग जैसी समस्या को मुख्य आमंत्रण दे रहा है। इन निष्कासित गैसों के माध्यम से देश में बढ़ते हुये प्रदूषण में इजाफा ही होगा। डैम से निकलने वाली मीथेन सामान्य स्थिति में पत्तों के सड़ने से उत्पन्न होने वाली मीथेन से 200 गुना ज्यादा होती है। यदि वास्तव में प्रदूषण की यही रही तो कहना न होगा ये डैम जी का जंजाल बन जायेगें।

भाग

2

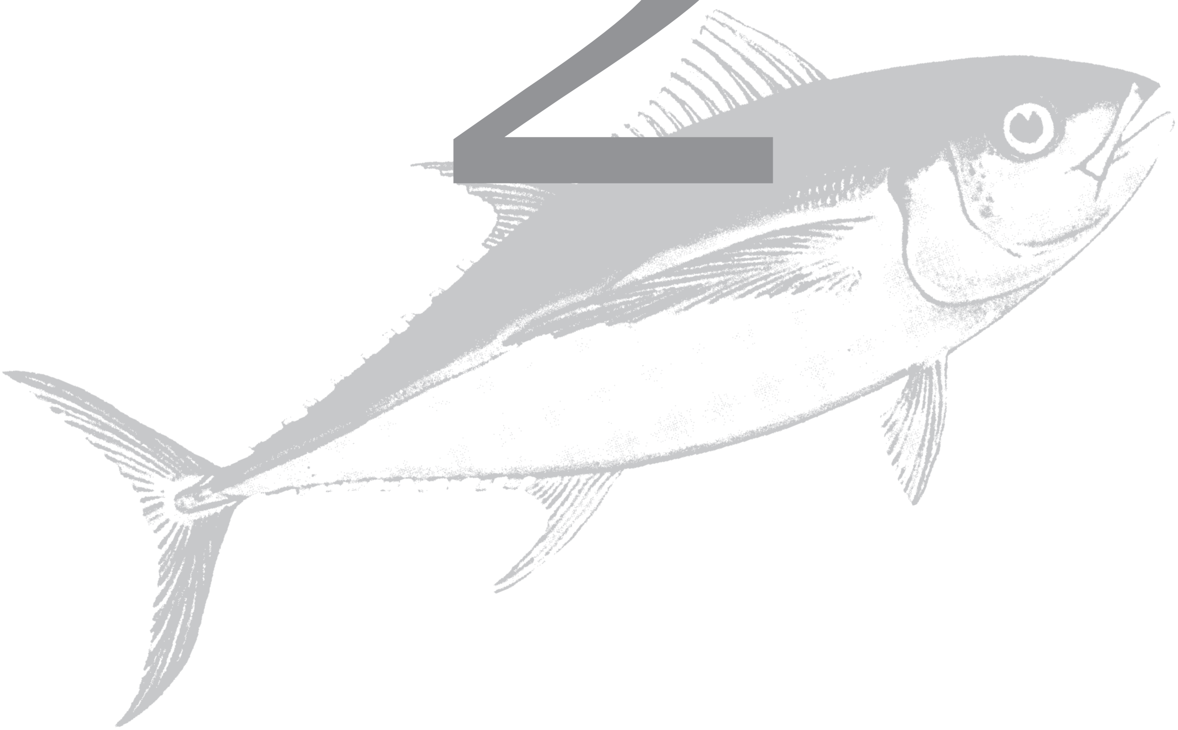

तटीय चिंगट जलकृषि में पर्यावरणीय चुनौतियाँ और इसका प्रबन्धन

के.के. कृष्णानी, बी.पी. गुप्ता, एस.एम. पिल्लै और पी. रविचन्द्रन
केंद्रीय खारापानी जलजंतु जीव पालन संस्थान, चेन्नई, तमिलनाडु

सारांश

निर्यात द्वारा विदेशी मुद्रा कमाने वाला सबसे लाभदायक व्यवसाय है चिंगट कृषि। यद्यपि यहाँ चिंगट उद्योग पिछले 20 वर्षों से कई क्रांतिकारी परिवर्तनों का अनुभव कर रहा है। तटीय जल की गुणता के अवक्षय ने कुछ क्षेत्रों की जलकृषि की लाभदायकता पर विपरीत प्रभाव डाला। सीमित जलक्षेत्र में अधिक जीवों का पालन व सुपोषण करने पर दबाव के कारण जल की गुणता नष्ट हो सकता है। यह पालन करने वाले जीवों पर प्रतिकूल, बल्कि रोग कारकों के लिए अनुकूल प्रभाव डाल सकता है। पेनिआइड चिंगट की कृषि में रोग की आशंकाजनक धमकी होने पर भी इस मूल्यवान क्रस्टेशियन का पालन हो रहा है। चिंगट की कृषि में रोग रोध एवं नियंत्रण काबू करने के लिए संवर्धनाधीन चिंगटों के स्वास्थ्य बढाने और जलीय पर्यावरण को रोगाणु मुक्त करने का उपाय स्वीकारना ही उपयुक्त मार्ग है। इस दिशा में जलकृषि सेक्टर का निरन्तर विकास "पर्यावरण-स्नेही" जलकृषि क्रियाकलापों से यानी चारों ओर के पर्यावरण पर संभावित प्रदूषण कम करके जलकृषि करने की रीति पिछले दो दशकों से प्रबलता प्राप्त कर रही है।

आमुख

तटीय क्षेत्रों के खारापानी जलकृषि में प्राथमिकतः चिंगट संवर्धन को है। पश्चिम बंगाल, आन्ध्रा प्रदेश, उड़ीसा और तमिलनाडु राज्यों के पूर्वी तटों में यह व्यापक रूप से चलता है। पश्चिम तट में स्थित केरल में इसकी एक परंपरागत संवर्धन प्रणाली (चावल खेती के साथ चिंगट संवर्धन) कायम है। गोआ और कर्नाटक में भी कुछ हद तक यह रीति चालू है। कुल चिंगट कृषि क्षेत्र के 50% आन्ध्रा प्रदेश में है। लेकिन विश्व भर के संवर्धित चिंगटों को प्रभावित विषाणु और जीवाणु जन्य रोग और तद्वारा उद्योग में भारी नष्ट चिन्ता का विषय बन गया है। इस लेख में चिंगट संवर्धन में पडने वाली पर्यावरणीय चुनौतियाँ और प्रबन्धन पर चर्चा की गयी है।

पत्रव्यवहार : डॉ. के.के. कृष्णानी, वरिष्ठ वैज्ञानिक
केंद्रीय खारापानी जलजंतु जीव पालन संस्थान,
सांतोम हाइ रोड, आर.ए. पुरम,
चेन्नई - 600028

चिंगट जलकृषि में पर्यावरणीय चुनौतियाँ

समुद्री पर्यावरण आज उद्योगों से जनित अपशिष्टों के रूप में प्रवहित धातुओं, रसायनों, पीडकनाशियों और कई भयानक प्रदूषकों का निक्षेपण तल बन गया है जो चिंगट कृषि के लिए उपयोगित जलस्रोत को दूषित कर देता है। अलावा इसके जलकृषि प्रणालियों में समुद्री एवं खारापानी जीवों का संवर्धन तालाबों में चयापचय लादों में परिणत हो जाने का और नालियों द्वारा ये पर्यावरण में पहूँच जाने की कई साध्यताएं है।

अतः चिंगट कृषि की सफलता जल की गुणता के नियंत्रण पर निर्भर है। इसलिए चिंगट कृषि के लिए उपयोगित जल, कृषि और उद्योग से जुडे प्रदूषणों से मुक्त होना चाहिए। इन पर्यावरणीय घटकों की अनुकूलतम स्थितियों में ही चिंगटों की अच्छी बढती प्राप्त की जा सकती है।

जल के भौतिक-रसायन गुणों से चिंगटों को होनेवाले रोग

निम्न विलेय ऑक्सिजन, अमोणिया और नाइट्राइट का उच्च स्तर जैसी विपरीत पर्यावरणीय स्थितियाँ और जलीय पर्यावरण में प्रकृति या मानवद्वारा उत्पन्न विष चिंगटों में असंक्रामक रोग के कारक हैं। पेशी ऊतकक्षय, शरीर ऐंठना, अपूर्ण निर्मोक, श्वासरोध, आम्लरक्तता (असिडोसिस), काला क्लोम रोग, लाल रोग (रेड डिसीस), मृदु कवचन (सोफ्ट शेल्लिंग) आदि इस प्रकार के रोग हैं।

रसायनों का उपयोग

जलकृषि का प्रबलीकरण रसायनों और जैविक उत्पादों का प्रयोग अनिवार्य बना दिया है। रोगाणुनाशियाँ, मत्स्यनाशियाँ, शाकनाशियाँ, जैव और अजैव उर्वरक, खाद्य योज्य, मृदा एवं जल अनुकूलक, प्लवक बढत कारक, जैव वस्तुएं, पीडकनाशियाँ पूरक खाद्य और प्रतिसूक्ष्म जीवियाँ आदि साधारणतया प्रयोग करनेवाले रसायनें हैं। रसायनों का अव्यवस्थित उपयोग आतिथेय की मृत्युता और शारीरिक कुरूपता के कारण के साथ प्रतिजैविक रोध-जीवाणुओं के विकास में परिणत हो सकता है। जलकृषि के लिए उपयोगित कुछ रसायनों के प्रयोग विनियमित करने या रोकने की सरकारी नीतियाँ रसायन चिकित्सा के नाशकारी परिणाम कम कर दिया है। इसके अतिरिक्त अनुसंधान संस्थानें भी पर्यावरण अनुकूल औषध और एवजियों को ढूँढ निकालने में तुले है। फिर भी जलकृषि में औषधों के सतर्क और नियंत्रित प्रयोग पर चिंगट और मछली कृषकों और औषध निर्माताओं एवं प्रदायकों के बीच एक प्रबल अभियान के बिना ये सारा प्रयास नकाम रह जाएगा।

चिंगट जलकृषि में दुःस्वाद

जलकृषि में दुःस्वाद उद्योग की आर्थिकी पर अनिश्चितता और असंतोषजनक उत्पादन के कारण उपभोक्ता शक्यता घटाने का कारण बन जाएगा। अलवणजल मत्स्यकृषि में शिंगटी उद्योग दुःस्वाद समस्याओं से प्रभावित है। चिंगट खेतों में अलवणजल के प्रवाह के दौरान ही चिंगट कृषकों को ये समस्याएं झेलना पडती है। मटियाला और फफूँदी प्रमुख स्वाद है जो कुछ नील- हरे काई जातियों द्वारा उत्पादित है। दुःस्वाद उत्पादन करनेवाले काई तालाब से तालाब में विविध होगा, लेकिन गरमी के महीनों में यह प्रायः सामान्य होगा जब अशन दर उच्च होता है और पादपप्लवक उत्पादन तेज़ करने वाला फोसफोरस निवेश बढ जाता है। जलकृषि उत्पाद बाज़ार में काबू पाने के अनुकूल उच्च गुणता का होना चाहिए। खेती में उत्पादित मछली और कवच मछलियों के मामले में स्वादिष्टता सबसे महत्वपूर्ण है। घटिया मछलियों का विपणन किए जाए तो फिर इसकी माँग नहीं होगी और लोग पालित मछलियों को छोडकर, अन्य स्वादिष्ट मांस और समुद्री खाद्य के पीछे जाएंगे।

बेहत्तर प्रबन्धन व्यवहार

पर्यावरणीय प्रबन्धन

उचित ध्यान देकर पशु पालन की बेहत्तर रीतियाँ अपनाने से और पर्यावरणीय स्थितियाँ, विशेषतः जल की गुणता अनुकूलतम बनाये रखने से जलकृषि में फूट पडने वाले जीवाण्विक रोगों को विचारणीय स्तर तक कम किया जा सकता है।

तालाब की तैयारी

तालाब में संचित काला ऊपरीमृदा निकालना, दरार होने तक सुखाना, दो या तीन बार जोतना, प्रत्येक फसल के बाद धूप में सुखाना आदि सुझाव कृषकों को रोग-प्रतिरोध मार्ग के रूप में आज दिया जाता है।

जैविक उपचार

जैविक उपचार सबसे नवीनतम एवं प्रभावी उपचार है। देशी एवं विदेशी सूक्ष्म जीवों या इनके समृद्ध संवर्धन को तालाबों में संदूषकों का जैव निम्नीकरण की दर बढाना, कार्बनिक वस्तुओं का खनिजीभवन और अवांछित अपशिष्टों को दूर करने केलिए की जाने की रीति है। जैविक उपचार से जल की

गुणता काफी बढ जाती है और कृषि के बाद पर्यावरण में प्रवाहित अपशिष्ट पानी में प्रदूषण का स्तर कम हो जाता है। इस क्रिया विधि में सूक्ष्म जीव, साधारणतया जीवाणु संदूषकों को खाते हैं और कार्बनिक वस्तुओं के खनिजीभवन बढाने के लिए उपयुक्त एनज़ाइमों का प्रबन्धन करते है और विषालू संकर अणु को जल और कार्बन डाइऑक्साइड या दोषरहित छोटे कणों में परिवर्तित कर देते है। इसके अतिरिक्त जैविक उपचार से रोगजनकों के आगे संवर्धित प्राणियों की प्रतिरोध शक्ति बढ जाती है। हितकारी जीवाणु पानी के रोगजनक जीवाणुओं को निकाल देते है या इनकी बढती रोकने लायक वस्तुओं का उत्पादन करते है। अन्य उपचारी प्रौद्योगिकियों की तुलना में जैविक उपचार एक सस्ता एवजी है।

प्रतिजीवीय अनुप्रयोग

सूक्ष्मजैविक मॉडुलक के उपयोग करके जैविक रोग नियंत्रण करने के विशेष विचार को व्यापक प्रचार प्राप्त हुआ है। यह मॉडुलक एक जीवाणुज संपूरक है जिसमें चुने गये अरोगजनक जीवाण्विक विकृतियों के एक या मिश्रित संवर्ध होते है जिनको प्रतिजीवीय (उपचार) कहते है। सर्वप्रथम पार्कर ने (1974) यह नाम रखा था। ग्रीक शब्द 'प्रो' और 'बयोस' इस नाम का मूल है। प्रोबयोन्ट का मतलब है जीवाणु यानी उपयोगी प्रोबयोटि बैक्टीरिया (प्रतिजीवीय जीवाणु)। बेनिफिसियल जीवाणु अतः बेनिफिसियल बैक्टीरिया या स्नेही जीवाणु या फ्रेन्डली बैक्टीरिया इसके लिए प्रयुक्त अन्य नाम है। इन प्रतिजीवीयों को मछली, चिंगट और झींगों के उत्सर्ज्य को और खाद्य वस्तुओं और प्लवक और अन्य जीव वस्तुओं के अपशिष्टों को कार्बन डाइ ऑक्साइड, नाइट्रेट, नाइट्रोजन और फोसफेट के रूप में अपघटित करने की शक्ति है। ये अकार्बनिक लवण सूक्ष्मशैवाल की बढती के लिए आवश्यक पोषण देते है, जिस समय जीवाणु तेज़ गति से बढकर रोगजनक सूक्ष्म-जीवों की बढती रोकते हैं। उदाहरण के लिए प्रतिजीवीय प्रयोग *डीसल्फोविब्रियो डीसल्फ्यूरिकन्स* निकालके विषैला हाइड्रजन सलफाइड का निर्माण रोकता है। सूक्ष्म काइयों का प्रकाश-संश्लेषण ऑक्सीकरण और कार्बनिक वस्तुओं के विघटन के लिए विलीन ऑक्सिजन प्रदान करता है। यह स्थिति जीवाणु और सूक्ष्म काइयों के बीच एक संतुलन अवस्था पैदा करती है जिससे संवर्धित प्राणियों के लिए अच्छी गुणता के जल पर्यावरण की सुविधा प्राप्त हो जाती है। इसके अलावा प्रतिजीवियों का प्रयोग खाद्य जीवों की संख्या में विचारणीय बढती लाती है। परिणामतः जलकृषि की प्राणियों के पोषण स्तर में प्रगति और रोगजनक सूक्ष्म जीवों के आगे प्रतिरोध शक्ति भी बढ जाती है और रोगों का टूट पडना कम हो जाती है।

तालाब आधारित जल पुनः संचरणीय प्रणाली

देश के तटीय क्षेत्रों में चिंगट जलकृषि में हुए तेज़ विकास ने कुछ पर्यावरण संबन्धी चिन्ता खडा कर दी है, विशेषकर पारिस्थितिकी में चिंगट अपशिष्ट द्वारा खुले जल प्रणाली में डालनेवाला प्रभाव पर। आज चिंगट कृषक उच्च बढती दर और उच्च उत्पादन के साथ रोग मुक्त चिंगट संपदा की सुरक्षा भी चाहते है। इसलिए पालन खेतों से कार्बनिक और पोषक वस्तुओं का बहिः प्रवाह कम करके चिंगट कृषि से पर्यावरण में संभावित पर्यावरणीय दुष्प्रभाव पूर्णतया दूर किया जा सकता है। लेकिन इसके लिए अपशिष्ट जल के उपचार के बाद पालन तालाबों में वापस प्रवहित करने के लिए एक बन्द संवर्धन प्रणाली होना अनिवार्य है। साधारणतया संग्रहण की सुविधा के लिए चिंगट तालाबों के पानी पूर्णतया बहा देता है। यांत्रिक क्रिया कलापों और अधिक मात्रा में बहिः प्रवाह के कारण कार्बनिक वस्तुओं, पोषकों, निलंबित ठोस वस्तुओं और सूक्ष्म जीवों का भरमार हो सकता है। ये पोषक और कार्बनिक वस्तुएं जैवनिम्नकरणीय होने के कारण उपकृषि के लिए उपयोग किया जा सकता है। आज बहिःस्राव उपचार की सुविधा अधिकतर कृषकों के पास नहीं है। बन्द पुनः संचरणीय प्रणाली जल की सुरक्षा करने के साथ बाहरी रोगजनकों को अंदर आने से रोककर रोग नियन्त्रण करता है। उत्कृष्ट प्रबन्धन व्यवहारों के

आधार पर जल का पुनः उपयोग कृषकों को अपशिष्ट जल की गुणता बढाने और अपनी कृषि रीतियों की निरन्तरता बनाये रखने में सहायता देती है।

यह बहुत ही स्पष्ट बात है कि मानव द्वारा उपयोग बढ जाने के साथ जल स्रोतों पर दबाव बढ जाएगा और जलकृषि आधारित खाद्यों की आपूर्ति के लिए इस सेक्टर में भी जल की मांग बढ जाएगी। संवर्धन के दौरान अनिवार्य स्थितियों में भी जल स्रोतों से अच्छी गुणता के जल के अभाव के कारण कृषक जल विनिमय कर नहीं सकते हैं। ऐसी स्थिति में जलकृषि के लिए उपयोगित जल का उपचार जलकृषि आगे चलाने के लिए पर्यावरण को आश्रय किये बिना जल के प्रबन्ध के लिए उपयुक्त मार्ग है।

अतः सरल, सस्ता एवं कम जटिलता की प्रभावी जल पुर्नउपयोग प्रणाली का विकास उपलब्ध जल को संभालने, प्रदूषण कम करने और समुचित पर्यावरणीय नियंत्रण के लिए सहायक होगा।

कृषकों को चिंगट कृषि के साथ आर्थिक महत्व के *ग्रासिलेरिया* और *काप्पाफाइकस* जैसे समुद्री शैवालों की कृषि भी करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

मैंग्रोव के लिए अनुकूल जलकृषि

मैंग्रोव - अनुकूल जलकृषि से मतलब बृहत् एवं संपूर्ण तटीय मेखला/क्षेत्र से प्रबन्धन (आइ सी इज़ड एम या आइ सी ए एम) से है जिसमें मात्स्यिकी, जलकृषि, वनविद्या उद्योग आदि क्षेत्रों की भिन्न आवश्यकताओं को एक साथ निभाया जाता है। मैंग्रोव अनुकूल जलकृषि को प्रमुखता देना अनिवार्य है। उदाहरण के लिए समुद्री शैवाल, द्विकपाटियों और मछलियों को मैंग्रोव जलक्षेत्रों में पिंजडों में और कर्कटों, चिंगटों और मछलियों को जलवनसंवर्धन या मैंग्रोव तालाबों और कुंड में एक साथ पालन किया जा सकता है। इस प्रकार की मैंग्रोव अनुकूल जलकृषि प्रौद्योगिकियाँ परिवारों द्वारा छोटे पैमाने पर मैंग्रोव का संरक्षण और उद्धार करनेवाले स्थानों में किया जा सकता है।

ओज़ोनीकरण (रोगजनक मुक्त जल की आपूर्ती)

यह निस्यंदन, पराबैंगनी प्रकाश (UV light), ओज़ोनीकरण या क्लोरीनीकरण द्वारा समुद्र जल का रोगाणुनाशन करने की रीति है। ओज़ोन के प्रयोग करके किये जानेवाली रसायनिक विधि जल उपचार कार्यविधि में प्रमुख है। ओज़ोन ऑक्सीजन का उच्चतम उपचायक या ऑक्सीकारक (oxidizing) रूप है। सावधानी से उपयोग किये जाए तो समुद्र जल की गुणता बढाने की यह एक सशक्त रीति साबित हो जाएगी। ओज़ोन समुद्रजल में शीघ्र विघटित होकर एक अति सक्रिय ऑक्सिजन परमाणु का प्रबन्धन करता है। ओज़ोन समुद्र जल को रोगमुक्त करेगा, कार्बन वस्तु का ऑक्सीकरण करेगा और विषैला नाइट्राइट का ऑक्सीकरण करके कम विषैला नाइट्रेट में परिवर्तित कर दिया जाएगा। ओज़ोन के ज़रिए नाश किये जीवाणुओं की दर क्लोरीन की तुलना में 3500 गुनी ज्यादा है। ओज़ोन से विषाणुओं के नशीकरण भी तात्कालिक, सुरक्षित और सुस्पष्ट है। अतः ओज़ोन को निसंदेह *आड नतिंग स्टेरिलन्ट* कहा जा सकता है। इसके अलावा ओज़ोन आविषाक्तों और दुःशास्य रसायनों के जैवनिम्नीकरन बढा देता है। ओज़ोन जल में अधिक समय तक नहीं रहता, जबकि विक्लोरीनीकरण आपेक्षिकतः बहुत मन्द गति में होता है।

जलकृषि में रसायनों के उपयोग में राष्ट्रीय विनियमन

भारत में जलकृषि में रसायनों का प्रयोग एक नयी प्रवृत्ति होने के कारण, रसायन और औषधों के उपयोग में नियंत्रण लाने की दृष्टि में कोई विनियमन आज उपलब्ध नहीं है। चिंगट संवर्धन खेतों में रोग फैलने के बाद ही विनियमन लाने की आवश्यकता पर चया प्रारंभ हुई थी। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड का, कुछ दूषणकारी वस्तु युक्त बहिः स्राव को छोड देने की ओर कुछ नियंत्रण है, पर ये

विशेषतः जलकृषि के लिए नहीं है। भारत सरकार द्वारा विकसित नियंत्रण के अनुबन्धों के अनुसार चिंगट संवर्धन तालाबों में रोगों को रोकने या उपचार करने के लिए खाद्य योजकों के रूप में रसायनों का उपयोग नहीं करना चाहिए, अवांछनीय मछलियों को निकालने के लिए या मृदा या जल के उपचार के लिए रोगाणुनाशियों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। जैव और अजैव उर्वरकों का प्रयोग जो अर्ध-तीव्र संवर्धन प्रणालियों में काफी प्रचलित है, अभिग्राही जलक्षेत्र में पोषण की मात्रा बढा दी जाएगी। इसलिए इनके उपयोग में भी नियंत्रण रख दिया गया है। इसलिए जहाँ तक हो जाए ऐसे उद्देश्यों के लिए जैव एवं वनस्पति उत्पादनों का उपयोग किया जाना चाहिए। मत्स्यनाशियों के उपयोग के संबंध में मार्गनिर्देश में बताया गया है कि चिंगट तालाबों से परभक्षियों और प्रतियोगियों को निकालने के लिए मत्स्यनाशियों और कवचनाशियों का व्यापक उपयोग किया जाता है। जलकृषि में इस उद्देश्य के लिए जैवनिम्नीकरणीय जैव-पौध निचोडों का उपयोग रसायन एजेंटों की तुलना में कम हानिकर होगा। संवर्धन प्रणाली में रसायनों का प्रयोग अनिवार्यतः वर्जित करना चाहिए। इसी प्रकार प्रतिजैविकियों और औषधों के उपयोग पर जी ओ आइ विनियमन का यह प्रस्ताव है कि "चिंगट कृषि में रोगों को धामने के लिए प्रयुक्त असंख्य प्रतिजैविकी उपद्रवकारी होती है और इनका विवेकरहित उपयोग ऐसे औषधों को जीतनेवाले चिंगट रोगजनकों के विकास में परिणत हो जाने की संभावना है"। इसलिए संवर्धन प्रणाली में प्रतिजैविकियों और औषधों का उपयोग नहीं करना ही उचित है।

जल की भौतिक - रासायनिक विशेषताओं से संबंधित चिंगट रोगों का प्रबन्धन

संवर्धन प्रणालियों में लगे रहनेवालों के मन में यह विचार अवश्य होना चाहिए कि अर्द्ध-तीव्र और तीव्र संवर्धन प्रणलियाँ रोगों की बढती के लिए अनुकूल पर्यावरण है। संवर्धन क्षेत्र में पालन करने वाली प्राणियों की संख्या कम करके दबाव दूर करना, अच्छी पालन रीति या प्रभावी प्रौद्योगिकी का प्रयोग, इष्टतम पर्यावरणीय स्थितियाँ, पर्याप्त मात्रा में ठीक प्रकार के खाद्य आदि रोगों को कम करने वाले तथ्य हैं। इसके अलावा कम गुणता का जल, उच्च संभरण सघनता, कम या अधिक पोषण भी रोग संक्रामक कारक है। प्रतिजैविकियों का प्रयोग अंतिम विकल्प के रूप में उपयोग करना चाहिए।

हरित जल प्रौद्योगिकी (समग्र चिंगट पालन)

चिंगटों के साथ तिलापिया/पालमीन का पालन, चिंगटों द्वारा खाये बिना छोडे गये खाद्यों और काइयों को खाने के अवसर प्रदान करने से एक बयोमानिपुलेटर की सेवा मिलती है। इस मछली द्वारा श्लेष्मक उत्सर्जन हरित जल का उत्पादन बढाकर दीप्त जीवाणुओं के बहुजनन कम कर देता है। अतः संवर्धन प्रणालियों में बीमारियों का फैलाव कम करने की भौतिक और जैविक विधियों के रूप में अन्य आर्थिक शक्य जातियों को चिंगट के साथ पालन करने की रीति को बढावा देना चाहिए।

कृषि में विराम (क्रोप होलिडे)

भारत में 1994 सितंबर और 1995 मई में फूट पडे चिंगट रोगों के बाद-रोगधाम के रूप में प्रस्तुत और एक रीति है कृषि में विराम। आन्ध्रा प्रदेश में रोग का विस्तृत फैलाव फसल की छुट्टी अनिवार्य कर दिया। संवर्धन प्रणाली और संबंधित जलस्रोत को रोग मुक्त करके सफल चिंगट कृषि के लिए शक्य बनाना इस प्रकार विराम देने का उद्देश्य है। इस बीच कृषक खेतों का सूखन भी करते है। इस प्रकार फसल की छुट्टी देने की रीति, इसके बाद चलायी गयी कृषि की दृष्टि में सफल मालूम पडता है।

फसल का आवर्तन

रोग नियंत्रण केलिए जातिवृत्तीय (फाइलोजेनेटिक) विभिन्नता के जीवों का एकांतर पालन किया जा सकता है जो तालाबों के अधो तल के रोगजनक जीवाणुओं के जीवन चक्र विभक्त करके तालाब को स्वस्थ बना देता है।

सुझाव

- जल की गुणता का अनुवीक्षण करते रहना और पर्याप्त पौष्टिकता के आहार का उपयोग करना।
- अति संभरण दूर करना; अन्य प्रकार के दबाव कम करना।
- रिसरवोयरों का उपयोग करना।
- फसल के आवर्तन का प्रयोग करना
- हरित जल प्रौद्योगिकी
- प्रति जैविकियों के प्रयोग से बचे रहना, विशेषकर फल संग्रहण के पूर्व-मैंग्रोव अनुकूल जलकृषि
- पर्यावरण अनुकूल खाद्य/अप्रदूषित खाद्य
- समग्र चिंगट कृषि
- रोगों का फूट पडाव रोकने के लिए भौतिक और जैविक विधियों को प्रगति देना, अन्य आर्थिक प्रमुख जातियों के साथ समग्र संवर्धन चलाना
- जलकृषि की उत्पादकता और निरंतरता के उन्नयन लक्षित अनुसंधान और विकास कार्यक्रमों को प्रोत्साहन देने की दृष्टि में (1) होर्मोनों का उपयोग (2) प्रोबयोटिक्स और बयो-ऑग्मेन्टेशन, (3) प्रतिरक्षा-उद्दीपक (4) रोग-प्रतिरोधक (5) रोग-निदान (6) कृषकों के बीच पर्यावरण स्नेही कार्यविधियों का प्रचार करने के लिए प्रौद्योगिकी स्थानांतरण क्रियाविधियाँ सशक्त करना।

मुख्य शब्द/Keywords

चयापचय लाद - metabolic load
असंक्रामक रोग - non-infectious disease
पेशी ऊतकक्षय - muscle necrosis
आम्ल रक्तता - acidosis (acid sulphate disease)
खाद्य योज्य - feed additive
जल अनुकूलक - water conditioner
प्लवक बढत कारक - plankton growth parameters
पीडकनाशी - pesticide
पूरक खाद्य - feed supplement
प्रतिसूक्ष्मजीवि - antimicrobials
प्रतिजैविक-रोध जीवाणु - antibiotic resistent bacteria
मटियाला - earthy
फफूँदी - musty
जैविक उपचार - bioremediation
प्रतिजीवीय अनुप्रयोग - application of probiotics
जलवन संवर्धन - aquasilvi culture
ओज़ोनीकरण - ozonisation
क्लोरिनीकरण - chlorination
आविषाक्त - toxicants
दुःशास्य रसायन - recalcitrant chemicals
विक्लोरिनीकरण - dechlorination
जातिवृत्तीय - phylogenetic
रोग-निदान - disease diagnosis

जलकृषि और पर्यावरण: पोषण कितने और कैसे

इमेल्डा जोसफ और पॉलराज आर.
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन, केरल

जलकृषि के विश्वव्यापक प्रचार से यह खाद्य सेक्टर का मुख्य आर्थिक स्रोत बन गया है। लेकिन पर्यावरण और सार्वजनिक स्वास्थ्य सुरक्षा उपायों के अभाव के कारण कई समस्याएं भी इसके साथ उभरकर आई है। पिछले दो दशाब्दों में हुए निजीकरण के फलस्वरूप मत्स्यन कार्य उद्योग बन गया है और मछली पकड से बढकर मछली पालन की ओर मुड भी दिखाया पडता है। यदि वर्ष 1990 में जलकृषि से मिला उत्पादन 10 मिलियन टन था तो बढकर 1997 में 29 मिलियन टन हो गया है। आजकल 220 जातियों के ऊपर आनेवाली पखमछलियों और कवच मछलियों की खेती हो रही है। वर्ष 1984 में कुल मछली उत्पादन में जलकृषि का योगदान 8% रहा था और वर्ष 2002 में यह 30% की दर में बढ गया है, बढती जलकृषि ने पर्यावरण संबंधी कई समस्याएं संजात की है।

किसी भी जन्तु के समान स्वस्थ, सक्रिय और सुडौल बढत केलिए मछली को भी पोषण की ज़रूरत है। ऊतकों की रचना और रासायनिक प्रतिक्रियाओं में पोषकों का योगदान होता है। अन्य जन्तुओं के समान मछली को भी प्रोटीन, लिपिड, कार्बोहाइड्रेट, विटमिन, खनिज जैसे पोषकों की माँग है। मछली पादप, जन्तु, सूक्ष्मजीव और खनिजों से निर्मित खाद्य से भी पोषण पा सकती है। प्रकृति में उपलब्ध कई खाद्य वस्तुओं से ये आहार से पोषण पाते हैं।

पालन अवस्था में जीवंत या पूरक (कृत्रिम) आहारों से इन्हें खिलाया जाता है। जीवंत खाद्य (लैव फीड) से इन्हें खिलाना खर्चीला होता है। सार्वजनिक जलजीवशालाओं में पालित वन्य मछलियों और अन्य मछलियों के पालन की शैशवदशाओं में जीवंत खाद्यों का उपयोग किया जाता है। सभी मछलियों को कृत्रिम आहार से खिलाया जा सकता है। पानी में स्थिर रहनेवाली वस्तुओं से पेलेट या गुटिकाकार में कृत्रिम खाद्य तैयार किया जाता है। पेलेटों की तैयारी विशेष रीतियों जैसे निकर्षण, बाष्पन से की जाती है। पोषण प्रदान करने या बढती में इन खाद्यों का योगदान होता है। मछली को प्रकृति से मिलनेवाले खाद्यों से कृत्रिम खाद्य के घटकों का कोई संबंध नहीं है, घरेलू जन्तुओं को खिलाने के लिए बनाए जानेवाले खाद्य के सामान की घटक कृत्रिम मछली खाद्य की रूपकल्पना में होता है। अतः इनकी तैयारी, मछली, पादप व जन्तुओं के उप उत्पादों में मांग के अनुसार के पोषकों को जोडकर की जाती है। मछली-मछली के खाद्य में प्रोटीन की माँग में विविधता है। उदाहरण केलिए समुद्री चिंगटों के खाद्य में प्रोटीन 18-30%, शिंगटियों के खाद्य में 32-80% और संकर रेखेदार बैस में 38-42% होने चाहिए। मांसाहारी मछलियों की तुलना में प्रोटीन की प्रतिशत माँग सर्वाहारियों (ओम्निवोर्स) में कम और शाकाहारियों में उस से भी कम होता है। इसी प्रकार उच्च सान्द्रतावाले पालन खेतों में कम सान्द्रतावाले पालन खेतों की तुलना में प्रोटीन की कम प्रतिशतता माँग है। बढनेवाली मछलियों को भी अधिक प्रोटीन मिलना चाहिए पर बढत की अंतिम दशाओं में इसकी आवश्यकता कम हो जायेगी। पालन करनेवाले पर्यावरण, पानी का तापमान व गुणता मछली के आनुवंशिक अभिलक्षण और अशन दर के अनुसार प्रोटीन माँग की प्रतिशतता में व्यतियान होता है। यदि मछली को खिलाने के खाद्य में आवश्यक मात्रा में फाट और

पत्रव्यवहार : डॉ. इमेल्डा जोसफ़, वरिष्ठ वैज्ञानिक,
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान,
पी.बी. सं. 1603, कोचीन - 682 018, केरल

कार्बोहाइड्रेट उपलब्ध हैं तो मछली की बढत में प्रोटीन का इस्तेमाल होता है, यदि माँग के अनुसार नहीं है तो प्रोटीन मछली को आवश्यक ऊर्जा प्रदान करके उनके बनाए रखने में सहारा प्रदान करता है। 50% कार्बन, 16% नैट्रोजन 21.5% ऑक्सिन और 6.5% हाइड्रोजन से प्रोटीन बनाया गया है।

मछलियों की विशेषता यह है कि ये उच्च प्रोटीनयुक्त खाद्य का उपभोग कर सकते हैं क्योंकि उपभोग का 65% ये विविध क्रियाओं से पर्यावरण में छोड देते हैं। नाइट्रोजन का अधिकांश भाग अमोणिया (NH_3) के रूप में मछलियों के क्लोमों से विसर्जित होता है और सिर्फ 10% घन मालिन्य के रूप में विसर्जित होता है। मछलीपालन खेतों से बहानेवाले पानी में नाइट्रोजन की अधिकता होने से ऊपरी पानी में जो सुपोषण (यूट्रोफिकेशन) हुआ होता है रोगजनन का कारण बन जाता है। इसे रोकने को कार्यकारी अशन और मालिन्य (रद्दी) प्रबंधन प्रणालियों का स्वीकरण आवश्यक होता है।

लिपिड या वसा (फैट) उच्च ऊर्जा पोषक है जिसका उपयोग जलजीवों की खाद्य तैयारी केलिए किया जाता है। यह प्रोटीन का भागिक प्रतिस्थापन करने लायक एक पोषक है। खाद्य तैयार करते वक्त मछली तेल खाद्य में मिलाकर लिपिड की पूर्ति की जाती है। लिपिड से प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट्स से दुगुना ऊर्जा प्राप्त होता है। मछली खाद्य में 5-15% लिपिड मिलाया जाता है, इस से जन्तु को आवश्यक फाट्टी आसिड (EFA) मिल जाने के अलावा वसा में विलीन होनेवाले वैटमिनों के वाहक की भूमिका भी निभायी जाती है।

जलजीव खाद्य के मुख्य घटक प्रोटीन और वसा मछलियों के उपोत्पाद (मील) और तेल से ही निकाला जाता है। कम मूल्य की पकड मछलियाँ जैसे मेनहेडन, कापेलिन, हेरिंग और मछली उत्पाद तैयारी में बाकी पडनेवाले उपोत्पाद जैसे मछली के सर, चमडा, हड्डियाँ, टूटेफूटे मांस से ये लिए जाते हैं। ऐसी मछलियाँ वन्य समुद्र से ही पकडी जाती है जिसकी पकड नियमित नहीं होने के कारण मांस और तेल की पूर्ति में स्थिरता नहीं है। आगोल स्तर पर खाद्य निर्माण में 35 मिलियन टन ऐसी मछलियों का इस्तेमाल किया जाता है। मांसाहारी मछलियों के पालन में कृत्रिम आहार की माँग बढता जा रहा है अतः इसको खिलाने केलिए उपयोग किए जानेवाला मछली मांस और वसा की जैव मात्रा पालन से उत्पादित होनेवाली मछली की जैवमात्रा से ऊँचा दिखाया पडता है। इस प्रकार के दस मांसाहारी मछलियों के पालन में उपयोग किए जानेवाला खाद्य संबंधी अध्ययन ने व्यक्त किया कि प्रति एक किलो ग्राम मछली उत्पाद के रूप में पाने को कृत्रिम आहार में 1.9 कि ग्राम मछली मांस और वसा मिलाना है। अतः पालन से एक कि ग्राम खाद्ययोग्य मछली मांस उत्पादित करने को 1.9 कि ग्राम मछली उपोत्पाद खाद्य में मिलाना पडता है। निर्भाग्यवश सर्वाहारियों व निस्यंदक जीवों की तुलना में मांसाहारी मछलियाँ जैसे सालमन, ग्रूपर और सी बास की खेती में बढती दिखाई पडती है। जलजीवी खाद्य निर्माण में वसा और तेल केलिए छोटी वेलापवर्ती मछलियों का भी इस्तेमाल किया जाता है। भले ही *एल नीनो* जैसे मौसमी व्यतियान और अतिशोषण से वेलापवर्ती मछलियाँ पीडित है उस अवसर पर खाद्य निर्माण लक्ष्य करके किए जानेवाला अतिमत्स्यन इन संपदाओं पर अधिक दबाव डालेगा इस में संदेह नहीं। संयुक्त राष्ट्रों (UN) के खाद्य और कृषि संगठन (FAO) की रिपोर्टों के अनुसार किसी न किसी काराणवश 25 मिलियन टन उपभोज्येतर मछली हर साल समुद्र में फेंकी जाती है। खाद्य निर्माण में इसका उपयोग करना कुछ भावुक रिपोर्टों के अनुसार अनैतिक और पर्यावरण विरुद्ध कहा गया है। लेकिन जलकृषि खाद्य निर्माण आर्थिकी द्वारा चालित होनेवाला उद्योग बन गया है। विश्व के जलकृषि उद्योग में करीब 35% फिशमील, मछली के उपोत्पाद जो कि 6 मिलियन टन आता है का उपयोग किया जाता है, बाकी 65% फिशमील अन्य जन्तुओं के खाद्य निर्माण में उपयोग में आता है। मछलियों केलिए आवश्यक पौष्टिक घटकों के कारण फिश मील मछली खाद्य

निर्माण में अत्यधिक अनुयोज्य माना गया है। लेकिन उच्च दाम और अनुपलब्धता के कारण इसके स्थान पर कम दाम के सोयाबीन मील, कोर्नग्लूटन मील आदि का उपयोग किया जा रहा है। कम दाम के मछली खाद्यों के निर्माण पर गंभीर अनुसंधान चल रहा है। आशा किया जाता है आगामी 2 दशकों के अंदर इस पर सफलता प्राप्त की जायेगी।

पिछले दो दशकों में जलकृषि से पर्यावरण पर होनेवाले संघातों पर गंभीरता से विचार हुआ और इसे रोकने पर सरकारी और सार्वजनिक स्तरों पर निरीक्षण-निगरानी चल रही है क्यों कि मुनाफेदार जलकृषि का दीर्घकालिक प्रयोग पर्यावरण पर विपरीत असर डालते हुए किया नहीं जा सकते।

जलकृषि में आनेवाले रद्दियों का रोध और संभरण चाहे विलीन और घन रूप में हो, खर्चीला है। इसलिए इन्हें समीपवर्ती खुले पानी में बहाई जाती है। इन रद्दियों का स्वीकरण पर्यावरण के अनुसार बदलता रहता है। कभी देखने को आया है कि इन रद्दियों से पानी में समुद्री मछलियों को आवश्यक खाद्य जैसे शैवाल, पादपप्लवक, परुषकवची जीवों का उदय होता है। कुछ मामलों में पर्यावरण के कुछ प्राकृतिक जीवों के अनचाहे बढती से पर्यावरण में दोषकारी प्रभाव भी होता है।

समीपवर्ती जल क्षेत्रों में जहाँ जलकृषि के पानी के बहाव होता है, में फोसफोरस और नैट्रोजन जैसी घनी रद्दियाँ आ पडने से पानी का सुपोषण होता है। मीठेजल में जीनेवाले पादपों को फोसफरस रूपी पोषक की कम ज़रूरत है जहाँ इनका बह आना जलपादपों केलिए हानिकारक है वैसे इसी कारण में अधिक मात्रा में नाइट्रोजन रद्दियों की उपस्थिति समुद्री पर्यावरण केलिए भी अनुयोज्य नहीं है। घन मालिन्य समुद्र व नदियों की मिट्टी (अवसाद) में बस जाना भी स्वस्थ पर्यावरण केलिए उचित नहीं है। जैव मात्रायें अत्यधिक मात्रा में बस जाने पर इनके डीग्रडेशन के लिए बाक्टीरिया और अन्य जीवों को अधिक मात्रा में ऑक्सिन का उपयोग किया जाना पडता है जिसकी वजह से अनोक्सिक ऑक्सिन कम होने की स्थिति होने से पर्यावरण तंत्र का नाश हो सकता है। मीठाजल जलाशय इस परिघटना का आसान शिकार बन जाता है क्यों कि इसके अधस्तर निश्चित स्तरों में बनाए गए हैं जिन में कुछेकों को ऑक्सिन का कम पुनर्जनन क्षमता है।

जलकृषि में जीवों के उत्सर्ज्यों से या खाद्यावशिष्टों से मालिन्य हुआ होता है। मछलियों के खाद्यावशिष्ट और मलवस्तुओं से घन मालिन्य उद्भूत होता है। मछलियों के मल में मिनरल, कार्बोहाइड्रेड, फैबर और थोडी मात्रा में प्रोटीन और फैट होते हैं। विलीन मालिन्य मछली के उपापचयन के उपोत्पादों से जनित उत्सर्ज्य है। पर्यावरण पर संघात पैदा करनेवाले ऐसे उपोत्पाद है अमोनिया जो डायटरी प्रोटीन के ऑक्सीकरण से और फोसफोरस जो अनुपयोगित डायटरी प्रोटीन से व्युत्पन्न होता है।

मछली पोषण में मछलियों को नियमानुसार खिलाना उचित है। आहार अधिक होने पर पानी का प्रदूषण, पानी में विलीन ऑक्सिजन की कमी, जैविक ऑक्सिजन की माँग में वर्धन, बाक्टीरियाओं में वर्धन के सिवा खाद्य पर अतिरिक्त खर्च भी होता है। मछली 25 मिनिट के अंदर जितना खाद्य खाया जायेगा उतना ही से उन्हें खिलाएं। निकर्षण किए प्लवरूपी खाद्य देते हुए खाद्य की माँग का निरीक्षण करते हुए आवश्यक मात्रा में खिलाने की रीति भी प्रयोग में लायी जा रही है।

इस प्रकार के सूक्ष्म प्रबंधन होते हुए भी कुछ खाद्य रद्दी बनकर नष्ट हो जायेगा ही। उदाहरणार्थ 100 यूनिट खिलावट रीति में 10 यूनिट का आखाद्य वस्तु मछली द्वारा उत्पादित 10 यूनिट घन रद्दी और 30 यूनिट द्रव रद्दी के रूप में नष्ट होता है (कुल 50%)। मछली की जाति, रूप, सक्रियता, पानी तापमान और पर्यावरणीय स्थितियों के अनुसार इन यूनिटों में अंतर आ सकता है।

अतः मालिन्य प्रबंधन की अच्छी तरीका आहार में नियंत्रण करना है। यह कृत्रिम आहार में पाच्य घटकों के मिलावट और पोषकों के अनुकूलतम उपयोगिता के अनुसार के मिलावट से खाद्य निर्माण करने से विलीन मालिन्यों के जनन को रोका जा सकता है। मछलियों को आवश्यक खाद्य संघटन की सूक्ष्म जानकारी, निर्माण प्रक्रियाओं का अच्छा संचालन; खिलावट की रीति और मात्रा की अच्छी जानकारी से खाद्य जनित मालिन्यों को रोका जा सकता है।

मुख्य शब्द/Keywords.

वसा - fat (फैट)
सुपोषण - eutrophication
मालिन्य, रद्दी - waste
मछली के उपोत्पाद - fish meal/फिश मील
मेनहेडन, कापेलिन, हेरिंग - menhaden, capelin, herring (low economic valued wild fishes)
घन मालिन्य/रद्दी - solid waste
उपापचयन - metabolism
निकर्षण - extrusion
खाद्य कृषि संगठन - FAO

मत्स्य स्वास्थ्य प्रबंधन में औषधीय व सुगन्धित पौधों का उपयोग

राघवेन्द्र सिंह, एन.एन. पाण्डेय व विनीता कुशवाहा
गो.ब. पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पन्तनगर, उत्तराँचल

जल-जीव पालन बहुत द्रुत गति से विकसित हो रहा एक ऐसा क्षेत्र है जो कि राष्ट्र के आर्थिक विकास में मील का पत्थर साबित हो रहा है। जहाँ एक ओर मछलियों का निर्यात अच्छी आय उपलब्ध कराता है वहीं दूसरी ओर यह एक अच्छा खाद्य पदार्थ भी है।

भारत में जल-जीव पालन का विकास पिछले 10-12 वर्षों में बहुत तेजी से हुआ है।

जल-जीव पालन के विकास के साथ ही साथ, इसमें कुछ समस्यायें भी जुड़ी हुई है जो इसके विकास पथ में व्यवधान उत्पन्न करती है व इनमें सबसे प्रमुख है "मछलियों में होने वाले विभिन्न रोग"।

यद्यपि मत्स्य पालन में विभिन्न दवाओं का प्रयोग इन रोगों के विरुद्ध काफी सफल रहा है फिर भी कुछ सूक्ष्म रोगाणु उदाहरण के लिए "*ऐरोमोनास हाइड्रोफिला*" मछलियों में रोग उत्पन्न कर रहे है।

यद्यपि डी.एन.ए. व जेनेटिक इंजीनियरिंग को आधार बनाकर यदि भविष्य में कुछ दवायें विकसित भी कर ली जायें तो भी वह एक समस्या ही बनी रहेगी क्योंकि वे अत्यधिक महंगी होगी।

इस समस्या से निदान के लिये यदि किसी रोगरोधक उद्दीपक (इम्म्यूनोस्टीम्यूलेन्ट) को विकसित किया जाय तो वह निःसन्देह मछलियों के रोगोपचार व उनसे बचाव में बहुत सहायक सिद्ध होगा।

पादप उत्पत्ति के पदार्थ व शाक इत्यादि, लाभकारी रोग रोधक उद्दीपक के रूप में विकसित किये जा सकते है व इनका उपयोग मछलियों के स्वास्थ्य प्रबंधन में किया जा सकता है।

मदुरई स्थित "सेन्टर फॉर फिश इम्म्यूनोलॉजी" में कुछ औषधीय पौधों का परीक्षण किया गया व इन्हें जल-जीव पालन में रोगरोधक उद्दीपक के रूप में उपयुक्त माना गया। पादप उत्पत्ति के कारण जहां एक ओर ये पर्यावरण के लिए हानिरहित है वही दूसरी ओर सरलतापूर्वक क्षय हो जाने वाले है। अतएव इन औषधीय पौधों का जल-जीव पालन में रोगरोधक उद्दीपक के रूप में विकास देश के जल-जीव पालन विशेषज्ञों के लिए एक अच्छा शोध का विषय है क्योंकि ये भविष्य में मछलियों में होने वाले रोगों से लड़ने में, सस्ते व उपयुक्त साधन साबित होंगे।

पिछले दो दशकों से भारत, पाकिस्तान, इडोंनेशिया, लाओस, बांग्लादेश व अन्य राष्ट्रों में ई.यू.एस. (एपीजूटिक अल्सरेटिव सिड्रोंम) नामक बीमारी एक समस्या बनी हुयी है। इस रोग से बचाव हेतु डा. एस.सी. मुखर्जी ने नीम (*एजाडिर्कटा इंडिका*) से तैयार एक्वानीम-10X नामक दवा का प्रयोग किया जो कि काफी सफल रहा व साथ ही साथ इस दवा का प्रभाव कवक व अन्य जीवाणु जनित रोगों के विरुद्ध भी देखा गया।

ऐसा देखा गया है कि दूरस्थ वन क्षेत्रों के मछुआरे कुछ जंगली पौधों की पत्तियों का प्रयोग मछली पकड़ने के लिए

पत्रव्यवहार : श्री राघवेन्द्र सिंह,
मत्स्य विज्ञान महाविद्यालय, गोविंद वल्लल पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर, उत्तराँचल

करते है क्योंकि उनमें कुछ निश्चेतक गुण होते हैं व वे ये भी बताते है कि पादप उत्पत्ति के होने के कारण, इनके प्रयोग द्वारा पकड़ी गयी मछलियाँ मानव आहार के लिए सर्वदा उपयुक्त है।

यद्यपि यह क्रिया कलाप आवांछनीय ढंग से हो रहे शिकार के अंतर्गत आते हैं, किन्तु फिर यदि इस पर विचार करें तो इनका प्रयोग परभक्षी व आवंछनीय मछलियों को हटाने में एक उपयोगी, उत्तम व पर्यावरण के अनुकूल, युक्ति के रूप में विकसित हो सकता है।

महुआ की खल का प्रयोग जहाँ एक ओर अवांछनीय मछलियों को हटाता है वही दूसरी ओर खाद का कार्य भी करता है।

ऐसा देखने में आया है कि प. बंगाल के कुछ मछुआरे कुछ बीजों व शाक के रसों का प्रयोग अच्छी हैचिंग व अण्डों की अधिक जीवितता दर प्राप्त करने के लिए मत्स्य बीज उत्पादन हैचरियों में करते है।

हर्र (*माइरोबोलस इण्डिका*) के बीजों को कुचलकर जल के साथ उनका मिश्रण बनाकर एक प्रयोग, पन्तनगर स्थित मत्स्य विज्ञान महाविद्यालय के वैज्ञानिकों द्वारा किया गया जिसमें इस मिश्रण को 4 ली. प्रति हैचिंग टैंक की दर से प्रयोग किया गया व परिणाम स्वरूप 19.35 घंटों में 85.23 प्रतिशत हैचिंग दर पायी गयी जबकि इस मिश्रण के प्रयोग के बिना यह क्रमशः 14-58 घंटे व 34.38 प्रतिशत थी।

पटना विश्वविद्यालय में एक शोध के दौरान सिंघी मछली (*हैटरोपिनिस्टिस फौसिलिस*) के जननांगों व यकृत पर कुछ आयुर्वेदिक औषधियों का प्रयोग करके उनके प्रजनन स्तर को देखा गया। सफेद मसुली (*एस्पारागस एडसेन्डेन्स*), बरगद (*फाइकस बगांलैन्सिस*) व नागकेसर (*ओकरोकारबस लोंगिफोलियस*) का प्रयोग, मछलियों के भोजन के साथ करके (पैलेट के रूप में) देखा गया कि मछलियों के गोनेडोसोमेटिक इण्डेक्स (जी.एस.आई.) व हिपैटोसोमेटिक इण्डेक्स (एच.एस.आई.) में वृद्धि हुई।

प्रजनन समय से पूर्व सफेद मसुली का प्रयोग नर मछली के जननांगों को अत्यधिक प्रभावित करता है जबकि बरगद व नागकेसर के प्रयोग से एस.एस.आई. में वृद्धि देखी गई (जबकि प्रजनन समय तीनों औषधियों का प्रयोग समान रूप से जी.एस.आई. व एच.एस.आई. को बढ़ाता है।)

अतःएव इस प्रकार विकसित औषधियाँ मत्स्य बीजोत्पादन की, सस्ती व उन्नत तकनीकि के विकास में सहायक होगी, विशेषकर कार्प मछलियों के बीजोत्पादन में।

कुछ भारतीय औषध निर्माण कम्पनियाँ कुछ औषध उत्पादों को बना रहीं हैं, जोकि मछलियों की अच्छी वृद्धि के लिए उपयोगी सिद्ध हो रही है।

इस प्रकार हम समझ सकते है कि मछलियों के स्वास्थ्य प्रबंधन के अतिरिक्त तालाबों के शुद्धीकरण व कार्प मछलियों के बीजोत्पादन में ये औषधीय पौधे अति उपयोगी है। इन पौधों को मत्स्य पालन के साथ अपनाकर अर्थात समन्वित मत्स्य पालन करके जहां एक ओर तालाब किनारे की खाली जगह का सदुपयोग औषधीय पौधों के रोपण में होगा वही, इन पौधों का उपयोग अच्छे मत्स्योत्पादन के लिए भी होगा।

कुछ अधिक नमी चाहने वाले पौधों जैसे, ब्राह्मी व स्टेविया इत्यादि को तालाब की ढालू सतह पर लगाया जा सकता है।

यद्यपि जन्तुओं के उपचार में इन औषधीय पौधों का काफी योगदान है किन्तु मछलियों में इनके उपयोग के ज्ञान का अभाव है, फिर भी यदि इस विषय पर गहनतापूर्वक अध्ययन व शोधकार्य किया जाय तो यह कहना अतिश्योक्ति न होगी कि सफल मत्स्योत्पादन व मत्स्य स्वास्थ्य प्रबंधन में औषधीय पौधों के उपयोग का भविष्य अत्यन्त स्वर्णिम होगा।

मत्स्य पालन में बाँस का उपयोग

विनीता कुशवाहा, एन.एन. पाण्डेय, राघवेन्द्र सिंह एवं अर्जुन अधिकारी
गो.ब. पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पन्तनगर, उत्तराँचल

बाँस जिसे अंग्रेजी भाषा में Bamboo के नाम से जाना जाता है का वानस्पतिक नाम Bambusa है।

पादप जगत में पाये जाने वाले समस्त पेड़-पौधों में बाँस अपनी विलक्षण व तीव्रतम गति से होने वाली वृद्धि के लिए संसार भर में विख्यात है।

बाँस हमारे देश के विभिन्न भागों में आसानी से उप्लब्ध होने वाला वृक्ष है। बाँस मूल रूप से नम व अधिक वर्षा वाले, पवर्तीय स्नानों पर पाए जानेवाला वृक्ष है। आसम, उत्तराँचल व तराई के क्षेत्र में बाँस प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

दैनिक जीवन के साथ ही साथ, बाँस मत्स्य पालन में भी अति उपयोगी है। मत्स्य पालन में विभिन्न कार्यों हेतु बाँस का प्रयोग किया जाता है जोकि निम्न प्रकार हो सकते हैं।

- केज कल्चर हेतु केज निर्माण में
- राफ्ट बनाने हेतु
- मत्स्य प्रजनन हापा की व्यवस्था में
- मत्स्य आहार देने में
- मछली पकडने के जालों में
- समन्वित मत्स्य पालन में
- तालाब के टूटे-फूटे बाँधों की मरम्मत में
- बाँस सह मत्स्य पालन में

पत्रव्यवहार : एन.एन. पाण्डेय, प्रभारी, कालेज लाइब्रेरी, मत्स्यविज्ञान महाविद्यालय
गोविंद वल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर, उत्तराँचल

- **केज निर्माण में -** केज कल्चर आज के समय में काफी प्रचलित है जिसमें कि विभिन्न मछलियों का संवर्धन होता है। केज निर्माण में, विभिन्न आकार के चीरे हुए बाँसों का प्रयोग किया जाता है। इन बाँसों की सहायता से एक पिंजरे के समान आकृति तैयार की जाती है, जिसे केज कहते हैं।

- **राफ्ट बनाने में -** मोलस्का संघ के विभिन्न जन्तुओं का संवर्धन सफलता पूर्वक, राफ्ट द्वारा लटकी हुयी रस्सियों पर खाली कवचों में किया जाता है। चीरे हुए बांसो को एक दूसरे पर अतिव्यापित करके एक बडे से अथवा आवश्यकतानुकूल फ्रेम का निर्माण किया जाता है जो कि राफ्ट कहलाता है। अतः राफ्ट बनाने में बाँस अति उपयोगी है।

- **मत्स्य प्रजनन हापा बाँधने हेतु -** मछलियों के प्रजनन हेतु हापा को बाँधने अथवा व्यवस्थित करने के लिए बाँस एक अत्यावश्यक सामग्री है। अतएव हापा की व्यवस्था हेतु बाँस मत्स्य पालन व बीजोत्पादन में लाभकारी है।

- **मत्स्य आहार देने हेतु -** मत्स्य आहार देने की कई विधियाँ प्रयोग में लायी जाती हैं। बोरे द्वारा पूरक आहार देना अच्छी विधियों में से एक है।

इस विधि में एक बाँस को तालाब के तल मे गाढ़ देते है जिस पर मत्स्य आहार से भरी बोरी लटका दी जाती है।

ग्रास कार्प को पत्तियाँ इत्यादि देने हेतु भी बाँस के वर्गाकार फ्रेम अत्यन्त लाभकारी है। अतः हम समझ सकते हैं कि मत्स्य आहार देने में भी बाँस एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

- **मछली पकडने के जालों में बाँस का प्रयोग -** मछली पकडने के जालों में भी किनारे पर जाल, को खींचने हेतु बाँस

का प्रयोग किया जाता है, क्योंकि बाँस हल्का होने के साथ-साथ मजबूत भी होता है।

- **समन्वित मत्स्य पालन में -** समन्वित मत्स्य पालन में भी बाँस अति उपयोगी है, क्योंकि बत्तख सह मत्स्य पालन व मुर्गी सह मत्स्य पालन में बत्तख व मुर्गियों की आवास व्यवस्था हेतु बाँस का प्रयोग किया जाता है। बत्तखों व मुर्गियों के बाड़े बनाने में बाँस अति उपयोगी सिद्ध होता है।

- **तालाब के टूटे-फूटे बाँधों की मरम्मत में -** तालाब के टूटे फूटे बाँधों के पुर्ननिर्माण व मरम्मत कार्य में बाँस अति लाभकारी है। क्योंकि इन टूटे स्थानों को मिट्टी से जोडते समय बाँस अतिरिक्त मजबूती व दृढ़ता प्रदान करता है।

- **बाँस सह मत्स्य पालन -** बाँस सह मत्स्य पालन एक अत्यन्त लाभकारी व उपयोगी व्यवस्था है। जिसमें कि बाँस व मत्स्योत्पादन दोनों ही एक दूसरे के पूरक होते हैं। जहाँ एक ओर तालाब का जल व गाद बाँस के लिए जल व उर्वरक का कार्य करते है वहीं दूसरी ओर बाँस, मत्स्य पालन में विभिन्न कार्यों हेतु प्रयोग किया जाता है। बाँस की पत्तियों को तालाब में डाल दिया जाता है जोकि पेरीफायटन की वृद्धि के लिए उत्तम सतह का कार्य करती है व अप्रत्यक्ष रूप से पेरीफाइटन के रूप में मछलियों को उत्तम प्राकृतिक आहार उपलब्ध करती हैं।

इसके अतिरिक्त ताजे बाँस का प्रयोग मनुष्य द्वारा आहार के लिए भी किया जा सकता है व इसके प्रसंस्करण द्वारा विभिन्न मूल्य वर्धित उत्पाद जैसे बाँस का अचार इत्यादि भी तैयार किया जा सकता है।

निष्कर्ष - अतः इस प्रकार हमने पाया कि बाँस का प्रयोग मत्स्य पालन में अत्यन्त लाभकारी व उपयोगी है व इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि बाँस, मत्स्य पालन के विकास में अत्यन्त सहायक सिद्ध हो सकता है व बाँस सह मत्स्य पालन जैसी व्यवस्थायें तो और भी उपयोगी व लाभकारी हैं जोकि अत्यन्त रोजगार परक भी हैं।

अतः निःसन्देह कहा जा सकता है कि मत्स्य पालन में बाँस का प्रयोग जहाँ एक ओर पर्यावरण अनुकूल मत्स्य विकास की गति को त्वरित करेगा वही दूसरी ओर रोजगार के भी नये-नये आयामों को जन्म देगा।

मुख्य शब्द/Keywords.
केज कल्चर - cage culture
राफ्ट कल्चर - raft culture
हॉपा - hapa
पेरिफायटन - periphyton

सी एम एफ आर आइ में हिंदी 2005

क्या	और	कैसे
रोज़ हिंदी ... से		
सीखें	-	प्रदर्शन बोर्ड से
लिखें	-	प्रोत्साहन और विशेष प्रोत्साहन योजनाओं से
बढाएं	-	जाँच बिंदुओं के प्रवर्तन से
पढें	-	दैनिकी, पत्रिकाओं, पुस्तकों की जारी से
देखें	-	हमारा वेब www.cmfri.com/hindi
हर तिमाही में हिंदी की/के ... से		
प्रगति की निगरानी	-	राजभाषा कार्यान्वयन समिति बैठक के आयोजन से
प्रगति का आकलन	-	तिमाही प्रगति रिपोर्टों के अवलोकन से
प्रगति का निरीक्षण	-	निरीक्षण समितियों के गठन व प्रवर्तन से
प्रयोग में बढावा	-	कार्यशालाओं के आयोजन से
प्रयुक्ति का विकीर्णन	-	तिमाही पत्रिकाएं *समुद्री मात्स्यिकी सूचना सेवा* और *सी एम एफ आर आइ समाचार* के प्रकाशन से
हर छमाही में हिंदी ... से		
अनिवर्य प्रशिक्षण का सुनिश्चयन	-	रोस्टरों के रख-रखाव और प्रतिनियुक्ति से
नगर में हिंदी का प्रचार	-	नाराकास बैठकों में भागीदारी व सहयोग से
हर वर्ष हिंदी को ... से		
वैज्ञानिक विषयों की प्रयुक्ति से संपन्न करें	-	हिंदी संगोष्ठी का आयोजन और कार्यवाही के प्रकाशन से
साहित्य से प्रौद्योगिकियों का प्रचार करें	-	मात्स्यिकी पत्रिका *मत्स्यगंधा* और विज्ञान विस्तार अंकावलियों के प्रकाशन से
उच्च शिक्षा से जोडें	-	स्नातकोत्तर छात्रों के अनुसंधान लेख हिंदी में पेश करने से
प्रवेग को तीव्र करें	-	ई-गवेर्नन्स व प्रशिक्षण औजारों से

वर्ष की प्रगति के सूचकांक

• मात्स्यिकी पर लिखे एक मौलिक लेख को राष्ट्रीय पुरस्कार • 3 वैज्ञानिक लेखों का राष्ट्रीय पत्रिकाओं में प्रकाशन • लान सुविधा से प्रयोग में प्रवेग • कोची नाराकास में उत्तम कार्य निष्पादन के लिए राजभाषा रोलिंग ट्रोफी • भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के संस्थानों में राजभाषा के उत्तम कार्यनिष्पादन के लिए स्थापित राजर्षि टंटन अवार्ड